अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ-मूलक ग्रामोद्योग-प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक

वार्षिक मूल्य ६) 卐 सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार 卐 एक प्रति २ आना

वर्ष-३, अंक-१० 卐 राजघाट, काशी 卐 शुक्रवार, ७ दिसंबर, '५६

निधि या राम सन्निधि ?

त्यागराज का एक भजन है : "निधि चाला सुखमा, रामनी सन्निधि चाला सुखमा ?"—निधि ज्यादा सुखदायक है कि राम की सन्निधि ज्यादा सुखदायक है ? दोनों में से तुम क्या चाहते हो ? इसलिए जब से 'निधि' से मुक्त होने का प्रस्ताव पास हुआ है, तब से हमारे शरीर में बिजली का संचार हुआ है। अब से हम किसी भी मनुष्य को कहेंगे कि दान दे दो और काम करना शुरू करो। अब तो वे यह नहीं कह सकेंगे कि दूसरे कार्यकर्ताओं को तो तनख्वाह मिलती है, इसलिए वे पूरा समय दे सकते हैं, हम किस तरह करें ? हमारा क्या आधार ? अब हम कहेंगे कि तुमको अब आधार रामसन्निधि का ! जिसके पास जाओगे, उसको राम समझ लो और कहो कि रामचंद्रजी, छठा हिस्सा दीजिये। इसीका नाम है, रामसन्निधि। यह हाथ में ले लो और कार्य के लिए निकल पड़ो !

ओडुगछत्रम्, मदुरा २५-११-'५६ —विनोबा

सन् '५७ का आवाहन !

(विनोबा)

हिंदुस्तान में ३०० जिले हैं। हर जिले के भूदान-आंदोलन की जिम्मेवारी एक-एक कार्यकर्ता उठा ले, इस दृष्टि से ३०० आदमियों की जरूरत है। सहायता में सर्व-सेवा-संघ का प्रकाशन-मंदिर आदि चलेगा, जो उनको प्रेरणा देता रहेगा। वे लोग भी जनता में जायेंगे और काम करेंगे।

क्रांति के खयाल से यह चीज बहुत महत्त्व की है कि हर जिले के साथ चेतन का सीधा सम्बन्ध इस तरह जुड़े। जहाँ समिति होती है, वहाँ चेतन कम होता है और संधान बढ़ता है। जिले का सम्बन्ध जिस व्यक्ति से रहेगा, वह शून्य बन कर सभी से सम्बन्ध जोड़ेगा। बाहर से कोई मदद नहीं मिलेगी, इसलिए नम्र बन कर वह सबकी मदद, सलाह आदि लेगा। इस तरह एक-एक चेतन के पास एक-एक जिला रहेगा। इस योजना में खतरा भी हो सकता है। कोई कम शक्ति वाला हो, तो कम काम होगा, गलत मनुष्य हो, तो गलत काम होगा। लेकिन बड़े आंदोलनों में ऐसे खतरे पच जाते हैं। इससे अनुभव बढ़ता है, क्रांति की तैयारी भी होती है।

आंदोलन की राह—

...सर्वोदय-कार्यकर्ता पलनी में मिले और उन्होंने निर्णय लिया कि भूदान-आन्दोलन, जन-आन्दोलन होना चाहिए और इसके आगे इस आन्दोलन का कुल जिम्मा आम जनता को उठा लेना चाहिए। उस निर्णय के मुताबिक हरएक जिले के लिए एक कार्यकर्ता रहेगा। इस निर्णय का अमल तुरंत ही किया जायगा। कुल देश में जो भूदान-समितियाँ हैं, वे इस ३१ दिसम्बर से खत्म हो जायँगी। मैं चाहता हूँ कि करोड़ों लोग इस आन्दोलन में हिस्सा लें और सन् १९५७ में, सारे देश भर में, लोग अपनी बुद्धि, उत्साह तथा शक्ति को इस काम में लगायें। ऊपर से कोई आदेश या नियंत्रण नहीं रहेगा। जिले के कार्यकर्ता सलाह देते रहेंगे और उनसे जानकारी हासिल होती रहेगी। आगे चल कर यह भी होगा कि हर गाँव में अच्छे कार्यकर्ता उठ खड़े होंगे और भूदान से ग्रामदान और ग्रामदान से ग्रामराज्य तक पहुँच कर इस आन्दोलन को सफल बनायेंगे। संपत्तिदान, सूत्रदान आदि दूसरे कार्यक्रम भी चलाये जायेंगे, जो इस आन्दोलन को चलाने के लिए और बढ़ाने के लिए आवश्यक होंगे। उसके लिए आवश्यक साहित्य भी तैयार किया जायगा। इस तरह से मैं चाहता हूँ कि लोग दिल में प्रेरणा तथा एक उद्देश्य को लेकर इस आन्दोलन को चलायें।

(पलनी, मदुरा २२-११-'५६) —विनोबा

मौत कौनसी अच्छी !

मैंने धनच्छेद की बात कही। मान लीजिये कि इन * लोगों ने तय किया कि पैसे का उपयोग नहीं करते हैं। फिर मीटिंग से लौटने के लिए पैसा न होने से पैदल ही चले जाते हैं, तो क्षण में ही क्रांति का दर्शन होता है। लोगों को भी दर्शन होगा कि कैसे पागल लोग हैं, जो पैसा नहीं, इसलिए पैदल जाते हैं ! यही पागलपन हममें आना चाहिए। आज ही आप ऐसा करो, ऐसी बात नहीं है। लेकिन ३१ दिसम्बर को जाहिर कर दो कि हमने सब छोड़ दिया। एक बार भूकम्प के समय रात को कमरे में मेरे मन में क्षण के लिए आया कि दौड़ कर बाहर चला जाऊँ, तो बचना सम्भव होगा। लेकिन 'गीता' का स्मरण हुआ और मैं बैठा रहा। वह ऐसी माता है कि मदद के लिए दौड़े आती है। भागने से बचना सम्भव था, तो मरना भी सम्भव था ! पर भागते हुए मरना भी कोई मरण है ! उससे बदतर कोई मौत नहीं। और जीने वाला हूँ, तो यहीं बैठे-बैठे जीऊँगा। मौत ही होने वाली हो, तो जो भी श्रद्धा है और नहीं है, वह सब इकट्ठी करके भगवान् का स्मरण करते हुए मरो !

इसी तरह हमने तय किया कि निधि वगैरा खत्म करो। इसका हम सब पर बिजली का-सा असर होगा, हिंदुस्तान पर भी होगा और संशय क्षीण हो जायेंगे। यह क्रांति की बात है, इसलिए निष्ठापूर्वक ही इसका संकल्प हो।

आगामी सम्मेलन किसलिए ?

सन् '५७ का संकल्प हमारा व्यक्तिगत संकल्प है, ऐसा कभी हमने नहीं माना और न लोगों ने ही माना। सारे पक्षों की हमें सहानुभूति मिली है और सब चाहते हैं कि कोटा (लक्ष्य) पूरा हो। इस समय आगामी चुनावों में सारे पक्ष व्यस्त हैं, लेकिन उसके बाद उनका उपयोग इस काम में हो सकेगा, इस दृष्टि से आगामी सम्मेलन का भी उपयोग हमको सोच लेना है। तब तक हम अपना काम जोर से कर सकेंगे, क्योंकि वित्तच्छेद और जिले-जिले के साथ चेतन का संबंध होगा। चुनाव के बाद देश के सामने समस्या उपस्थित होगी कि जो लोग भूदान के साथ सहानुभूति रखते हैं, वे क्या इतने बड़े संकल्प को, जिसका उच्चारण सारे देश में हुआ है, पराजित होने देंगे ? क्या वे यह कहेंगे कि हम बैठे रहें और इनकी फजीहत होने दें ? क्या उसमें देश, सरकार, कांग्रेस, प्रजासमाजवादी पक्ष आदि सबकी इज्जत रहेगी ? यह काम हम करने वाले हैं, ऐसा माना जाता है। 'हम' याने कौन ? उसमें सभी आ जाते हैं। अतः अगर यह काम खंडित होता है, तो कुल देश की प्रतिष्ठा, मान और इज्जत खंडित होती है। गाँव-गाँव से यही आवाज निकलेगी। अतः सब हमारी मदद के लिए तैयार होंगे और आगामी सम्मेलन में सबकी तरफ से ऐसा बड़ा संकल्प होगा कि सब जोरों से काम में लगेंगे। फिर

---

* सभा में उपस्थित लोगों को लक्ष्य करके।

कोई वजह नहीं कि यह काम दो-चार महीनों में पूरा न हो। पं. नेहरू ने कहा कि "चुनाव लंबे चलने से शक्ति-क्षय होता है, द्वेष बढ़ता है, इसलिए १५ दिन में चुनाव खत्म कर देंगे। आगे एक दिन में भी चुनाव पूरे हों, ऐसा इंतजाम किया जा सकता है।" अप्रत्यक्ष चुनाव में वह और भी सम्भव होगा। तो अगर पं० नेहरू एक दिन में चुनाव पूरा करने की बात करते हैं, तो एक दिन में जमीन का बँटवारा भी क्यों नहीं हो सकता? देश की इच्छा-शक्ति जाग्रत होने पर चन्द महीनों में यह काम हो सकता है, जरूरत इमेजिनेशन-कल्पनाशक्ति—की है। सन् '५७ में न सिर्फ भूमिक्रांति होगी, बल्कि सारी दुनिया में शांति की स्थापना हो सकती है। दुनिया आज हिंदुस्तान की ओर ताक रही है। अतः हमें तैयार रहना है। 'गीता' में कहा है—"यदा यदा ही धर्मस्य...!" आप पूछेंगे, यह तो दैववाद हुआ! हमें कुछ करना नहीं, भगवान् तो आ ही रहे हैं।" लेकिन भगवान् आ रहे हैं, ऐसी भावना से भी सत्पुरुष तैयार हो जाते हैं। अवतार तो हो ही चुका है। भगवान् तो आ ही रहे हैं। पर हम ही उन्हें लाने में जितनी देरी करेंगे, उतनी ही देरी होगी। उस दृष्टि से हम तैयार रहें, तो आगामी सम्मेलन के द्वारा कुल देश का संकल्प इकट्ठा हो सकता है। मन में वह बात है ही, जो सम्मेलन में प्रकट होगी।

गण-सेवकत्व की महिमा

सामूहिक पदयात्राओं के कारण भी छोटे-छोटे लोग निकल पड़े हैं। ५० जिलों का उत्तर प्रदेश, जहाँ हम १० मास घूम चुके, लेकिन हमारे जाने के बाद वह मृतवत् ही रहा, क्योंकि वह नेताओं का प्रदेश है! लेकिन जहाँ ईश्वर काम करता है, वहाँ मनुष्य को अकल सूझती है। अभी करणभाई कह रहे थे कि अब हमें सामूहिक पदयात्रा के कारण आपसे बात करने की हिम्मत आयी है, प्रदेश में उत्साह और कार्यकर्ताओं में विश्वास बढ़ रहा है और जनता-माता बच्चों के स्वीकार के लिए मानो उत्सुक है।

समस्याओं का देश

हमने अपने कार्यक्रम के सम्बन्ध में अभी कोई खास योजना नहीं बनायी है। टटोल रहे हैं। शायद तमिलनाड में ही हिरण्मय दर्शन हो। हिंदुस्तान में कई समस्याएँ हैं। तमिलनाड में एक बड़ी समस्या यह है कि आर्य और द्रविड़ों का एक बड़ा भारी भेद इतिहासकारों ने पैदा किया है। उसका भी छेद इस आंदोलन के जरिये होगा। कोई आर्य हो या द्रविड़, गरीबों का काम तो नहीं बन रहा है। पर यह काम हो जाय तो बहुत बड़ी बात होने वाली है। उधर बम्बई राज्य में भी समस्याएँ ही समस्याएँ हैं। एक काम वहाँ हुआ, परन्तु उसकी अनेक तरह की प्रतिक्रियाएँ भी हुईं। अब तो वहाँ एक बहुत बड़ा भारी काम करना है। उधर पंजाब की हालत और भी भयानक है और सिक्ख-हिंदू जोड़े तो गये हैं, परन्तु वे भयभीत हैं। लेकिन भूदान के कारण कुछ आत्म-विश्वास भी पैदा हो रहा है। इधर बिहारवालों से हमने कहा कि तुम्हारी जैसी बड़ी शक्ति हमने हिंदुस्तान में अन्यत्र कहीं नहीं देखी! लेकिन कोई ऐसी चीज है, जिससे काम नहीं बन पा रहा है। खूब जोर लगाओ और सारी जमीन बाँट दो। वे कहते हैं, "कानूनी दिक्कतें हैं।" हमने कहा, "अरे, जमीन अपने देश की है। जितना कानून से हो सकता है, उतना कानून से करो, बाकी बिना कानून से। कुछ झंझटें खड़ी होंगी, लेकिन उसकी चिंता नहीं करनी है।" हमने तो विनोद में यह भी कहा कि बिहार में ऐसा सुंदर राज चल रहा है कि उससे अधिक शासनमुक्त समाज कहीं भी नहीं होगा! राज्यकर्ताओं को पता ही नहीं कि कौन जमीन कहाँ है! ऐसी हालत में कानून की मदद न मिले, तो भी बँटवारा तो कर ही डालना है, अन्यथा सारा मामला पोल है, ऐसा असर होगा। साथ में ३२ लाख का उसका बचा हुआ कोटा भी वह पूरा कर सकता है, ऐसा हमें विश्वास है। इसी विश्वास के कारण तो हमने बिहार छोड़ा, अन्यथा उसे छोड़ कर क्यों आते? उधर उड़ीसा में नवबाबू आदि तैयार हुए ही हैं, तो वहाँ भी खूब काम चलेगा।

क्रांति की त्रिपथगा

'धनच्छेद', 'हर जिले के साथ एक मनुष्य', 'सामूहिक पदयात्राएँ' इत्यादि के जरिये क्रांति की तैयारी कीजिये।

(पल्नी, मदुरा, २१-११-'५६)

जनता जनार्दनाय !

पलनी में निर्णय लिया गया कि सारे भारत भर में जो वैतनिक कार्यकर्ता इस काम में हैं, उनका वेतन का आधार निधि में से खत्म हो जायेगा। सवाल आता है कि अब भूदान-आंदोलन कैसे चलेगा? हमारे मन में उत्तर आता है कि जो भगवान् वैसी तोड़ने की अकल देता है, वही जोड़ने की भी अकल देगा। अब रचनात्मक कार्यकर्ता जाग जायेंगे और दूसरे लोग भी जाग जायेंगे, क्योंकि वे देखेंगे कि बाबा ने अपना आधार-इतने बड़े आंदोलन का आधार ही तोड़ दिया। व्यक्तिगत आधार तोड़ा गया होता, तो कुछ बात नहीं थी। वह तोड़ने के लिए तो जो ओढ़ा है, वह फेंक दिया और चल दिया। यहाँ से वहाँ तक जायेंगे, बीच में ठंड लगेगी, तो कोई शख्स कहेगा कि बाबा आपको ठंड लग रही है, यह कपड़ा लीजिये और बाबा के शरीर पर फिर से कपड़ा आ जायेगा। इसलिए व्यक्तिगत आधार तोड़ना कोई मुश्किल बात नहीं है, परंतु सारे आंदोलन का आधार जो समझा जाता था, उसको तोड़ा। सारे भारत में जहाँ-जहाँ यह संदेश पहुँचा होगा, वहाँ रचनात्मक और निर्माण के कार्यकर्ता एकदम से जाग जायेंगे। भिन्न-भिन्न राजनैतिक पक्षों में से जो भूदान के लिए सहानुभूति रखते हैं, वे भी एकदम जाग जायेंगे। वे सोचेंगे कि इस आंदोलन की इज्जत याने बाबा की नहीं सारे देश की इज्जत है, इसलिए जब कि बाबा ने इस आंदोलन के लिए निधि का आधार तोड़ा और उसके कारण यदि आगे आंदोलन ठप हो गया, तो उससे हम सभी लोगों की इज्जत जायेगी। क्या ये सारे लोग चुप रहेंगे? इसलिए हम कह रहे हैं कि हमने तोड़ने का काम कर लिया। अब काम आप सब लोगों के हाथ में सौंपते हैं। आप सब हमारे कार्यकर्ता हैं।

—विनोबा

ओडुगछत्रम्, मदुरा, २५-११-'५६

कम्यूनिस्टों से मित्रतापूर्ण निवेदन : १.

(जयप्रकाश नारायण)

मैं अपने कम्यूनिस्ट (साम्यवादी) दोस्तों से कुछ निवेदन करने का साहस करता हूँ। मैं 'दोस्त' शब्द का प्रयोग सोच-समझ कर करता हूँ, क्योंकि भारत की कम्यूनिस्ट पार्टी में और खासकर उसके नेताओं में ऐसे कई व्यक्ति हैं, जो काँग्रेस सोशलिस्ट पार्टी में मेरे बहुत निकट के सहयोगी रहे हैं।

दुनिया के समाचारपत्र-संवादों से ऐसा मालूम होता है कि रूस की कम्यूनिस्ट पार्टी की बीसवीं काँग्रेस ने सब तरफ कम्यूनिस्ट क्षेत्रों में विचार और आचार के विषय में एक क्रान्तिकारी प्रक्रिया शुरू कर दी है। मेरा विश्वास है कि इस विषय में भारतीय कम्यूनिस्ट पार्टी अपवाद नहीं है। इसलिए इस प्रक्रिया में सहायता पहुँचाने की मनशा से मैं ये मित्रतापूर्ण शब्द लिख रहा हूँ।

मैं आशा करता हूँ कि क्रुश्चेव का भाषण और उसके बाद की घटनाओं की जो जबरदस्त अहमियत है, उसको हरेक कम्यूनिस्ट महसूस करता है। क्रुश्चेव ने जिन गुप्त बातों पर रोशनी डाली है, उसके पीछे उनका क्या उद्देश्य था, इसको कई तरह से समझाया गया है। लेकिन क्रुश्चेव के उद्देश्यों का खास महत्त्व नहीं, क्योंकि उद्देश्य कुछ भी क्यों न रहे हों, इसमें कोई शक नहीं कि वे राजनीतिक थे। अधिक महत्त्व इस बात का है कि जिस देश को सारे संसार के सामने आदर्श के रूप में रखा जाता था, उस देश में एक पुश्त तक देवता के समान पूजे जाने वाले नेता ने संसार को चकित कर देने वाले

गुनाह किये, यह अधिकृत रूप से स्वीकार किया गया। अब सब जगह लोग कम्यूनिस्टों से यह अवश्य पूछेंगे कि क्या यही वह भद्दी और भयानक चीज है, जो आप हमारे हाथ बेचना चाहते थे ?

तो कम्यूनिस्टों को अपने आप से पहला सवाल यह पूछना चाहिए कि क्रुश्चेव आज जो बातें रोशनी में लाये हैं, उनके बारे में इतने दिनों तक कम्यूनिस्टों को अंधेरे में कैसे रखा जा सका ? सारी गैरकम्यूनिस्ट दुनिया क्या इन तथ्यों के बारे में करीब तीस साल से चर्चा नहीं कर रही थी ? असल में क्रुश्चेव ने जिन गुप्त बातों को प्रकट किया, वे गुप्त थीं ही नहीं। यह नामुमकिन है कि कम्यूनिस्ट, कम से कम उनके नेता इन बातों को नहीं जानते थे। तो फिर वे अब तक खामोश क्यों रहे ? अब तक इस प्रश्न का कोई समाधानकारक उत्तर नहीं दिया गया है।

दूसरा एक सवाल उठता है। क्या कम्यूनिस्ट अब वहीं पर आकर रुकने वाले हैं, जहाँ क्रुश्चेव ने उन्हें पहुँचा दिया है ? क्या वे सत्य की खोज में और आगे नहीं बढ़ने वाले हैं ? क्या कम्यूनिज्म के लिए सत्य किसी काम का नहीं है ? क्या कम्यूनिज्म झूठ बातों की बुनियाद पर खड़ा किया जा सकता है ? क्या क्रुश्चेव ने सारी बातें खोल दी ? कम्यूनिज्म के नाम पर जो जो अपराध किये गये, उन सबका धिक्कार क्या उन्होंने किया है ? क्या उन्होंने खुद अपने अपराधों को स्वीकार किया है ? अगर कीरोव का खून गुनाह था, तो फिर झीनोवीव, कामानेर, रादेक बुखारिन वगैरा के खून के बारे में क्या कहना चाहते हैं ? अगर स्टॅलिन ने अपने राजनीतिक विरोधियों और प्रतिस्पर्धियों को 'लोगों का दुश्मन' कहकर, उन पर एक असभ्य और झूटमूट का आरोप जबरदस्ती लगाया और उन्हें खतम किया, तो क्या वही आरोप जब बेरिआ और उसके गिरोह पर लगाया गया, तब प्रामाणिक और समाजवादी वैधानिकता से क्या वह सुसंगत हो गया ? कम्यूनिस्टों के लिए मास्को में जो अंधेरियाँ बनायी गयीं, उनको फिर से लगा कर अपने दायरे से बाहर देखने से वे आज भी इनकार करेंगे ? या फिर अपनी मार्क्सवादी वस्तुनिष्ठा की घोषणा और प्रतिपादन करते हुए वे मानव की क्रान्तिकारी मानसिक स्वतन्त्रता का नारा बुलन्द करेंगे ?

इससे भी और महत्त्व का एक प्रश्न है। क्रुश्चेव ने जो अपराध गिनाये हैं, उन अपराधों को तीस बरसों से अधिक समय तक रूस की कम्यूनिस्ट पार्टी और रूस की जनता ने अपने नाम पर कैसे होने दिया ? यह कहना कि यह सब विभूतिवाद का नतीजा है, तुच्छ से तुच्छ मानवीय बुद्धिमत्ता का अपमान करना है।

> इसमें कोई शक नहीं कि इस दुनिया में जितने अत्यंत प्रभावशाली व्यक्ति हुए, उनमें से स्टॅलिन एक था। परन्तु क्या इससे कोई इन्कार कर सकता है कि उसने जो कुछ किया, वह सब मार्क्सवाद और कम्यूनिज्म के नाम पर रूस में जो राजनीतिक और आर्थिक पद्धति कायम हुई, उसी की बदौलत किया ? स्टॅलिन को उस पद्धति से अलग समझना और पद्धति के विषय में संदेह प्रकट किये बिना ही स्टॅलिन का निषेध करना, एक ऐतिहासिक घटना का मार्क्सवादी दृष्टि से पृथक्करण करना हरगिज नहीं है।

व्यक्तिपूजा और स्टॅलिन का इन्कार मात्र कर देने से उस पद्धति में सुधार या परिवर्तन नहीं हो सकता। और जब तक उस पद्धति को दुनिया के सामने कम्यूनिस्ट-बहिश्त के रूप में रखा जाता है, तब तक कम्यूनिज्म आत्मतिरस्कृत साबित होता है।

संयुक्त राष्ट्रसंघ और गांधीवाद

[रामचंद्र गोरा]

हर एक युग की अपनी एक विशेषता रहती है। हमारे इस युग की विशेषता है, अणुशक्ति, इसलिए इसे हम 'अणुयुग' कहते हैं। यह अणुयुग होते हुए भी यह युग-शक्ति विशाल जनता के कल्याण के लिए नहीं है, अपितु कुछ थोड़े-से लोगों के स्वार्थ के लिए, अनगिनत लोगों की बर्बादी के लिए उपयोग में आ रही है।

ऐसा होते हुए भी आज समाज में 'एक कुटुम्ब' का विचार प्रबल हो रहा है। व्यक्ति ने व्यक्तिगत स्वार्थ कभी का छोड़ दिया है। जिस दिन कुटुम्ब-संस्था का प्रादुर्भाव हुआ, उस दिन से व्यक्ति में त्याग ने प्रवेश कर लिया। दूसरों के लिए त्याग करने की उसने आदत डाल ली। पर वह त्याग परिवार, जाति, फिरका, पंथ, धर्म, दल, पक्ष, देश तक आकर रुक गया। अभी वह सब मानवों के लिए मानवता तक व्यापक नहीं हुआ। त्याग और सहयोग बंधन में पड़ कर सीमित हो गये। व्यक्ति तथा मानवता के बीच विकसित होते हुए उस त्याग में रुकावटों का आना हानिप्रद है। इस प्रकार रुकावटें आज हैं, इसीलिए विश्व में विश्व-युद्ध का खतरा और आर्थिक विषमताएँ हैं। तानाशाही को इसी कारण अवकाश मिल रहा है। उनके निराकरण के लिए यह आवश्यक है कि मानवता का विभेद करने वाली रुकावटों पर काबू पाकर, एक कुटुम्बत्व के विचार को आचरण में लाया जाय।

राष्ट्रसंघ जैसी संस्थाएँ इस प्रकार मानवता के आदर्श को आचरण में लाने के लिए सहायक हो सकती है। सारे जगत् में विविध रूपों में मानवता की दृष्टि से विशाल संस्थाएँ स्थापित होकर काम कर रही हैं। 'कोमिन्फारम्' और 'कोमिंटर्न' जैसी संस्थाएँ भी दूसरी दृष्टि से विशाल मानवता की आकांक्षा को लेकर ही स्थापित हुईं। अभी जो अंतर्राष्ट्रीय संस्थाएँ हैं, उनमें राष्ट्रसंघ ही बलवान् है। लेकिन राष्ट्रसंघ ने अखंड मानवता की घोषणा अब तक नहीं की है। जो भेद मौजूद हैं, उन्हें पहचानते हुए, उनमें सहिष्णुता कैसे रखी जाय, यह सिखाने का वह यत्न करता है। इसलिए इस रीति से हम समस्याओं का उचित हल निकाल नहीं पा रहे हैं। पर विश्व-कुटुम्ब की भावना पैदा करने के लिए इस प्रकार से प्रयत्न सहायक हो सकते हैं, इसमें संदेह नहीं।

अखण्ड मानवता के लिए प्रयत्न

जहाँ राष्ट्रसंघ जैसी संस्थाएँ अखंड मानवता के लिए प्रयत्न करते हुए, भेदों के विषय में सहिष्णुता आचरण में लाने की कोशिश करती हैं, वहाँ दूसरी तरफ हमारे इस युग में अखंड मानवता के लिए प्रयत्न करने वाले एक महान् व्यक्ति हुए— महात्मा गांधी। व्यक्ति राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक मर्यादाओं में बँधा हुआ नहीं है, इसलिए अखंड मानवता व्यक्ति के आचरण में लायी जा सकती है– यह गांधीजी ने स्वयं आचरण करके दिखाया है। गांधीजी ने सिखाया कि मानवता को खंडित कर उसके अलग-अलग टुकड़ों पर आधारित असत्य और हिंसा का निराकरण करना चाहिए। आज मानवता के रास्ते में रोड़ा बनी हुई आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक विषमताओं के आधार असत्य और हिंसा ही हैं। भाग्यवाद जैसे असत्य पर आधारित तत्त्व तथा हिंसा पर अवलंबित राजनैतिक शासन ही दरिद्रता, छुआछूत, वर्णभेद और तानाशाही का पोषण करते हैं। असत्य और हिंसा को निकाल बाहर करें, तो दरिद्रता, छुआछूत, वर्णभेद और तानाशाही का समर्थन कैसे किया जा सकता है ? पानी को ऊँची-नीची सतह पर रखने के लिए बीच में बाँध बांधना पड़ता है। यदि बाँध तोड़ दिया जाय, तो सारा पानी समतल हो जाता है। उसी तरह जाति, पंथ, धर्म, पक्ष, वर्ण, देश जैसे हिंसा और असत्य से भरे बाँधों का आधार लेकर समाज विषमताओं की सतह पर खड़ा है। विषमता के आधार बनी उन रुकावटों को गिरा कर समाज में समता, सत्य और अहिंसा का प्रतिष्ठापन करना है। हमारे लिए गांधीजी की यही सिखावन है। इसलिए हिंसा से विषमता का पोषण करने वाले कानूनों का उल्लंघन करना मानवता प्राप्त करने का मार्ग है। असहयोग आंदोलन के रूप में गांधीजी ने यही बात समाज को दी। उन्होंने सिखाया कि व्यक्तित्व रखने वाला मानव बाह्य परिस्थितियों से हार न मान कर स्वयं विचार करके अपने कर्तव्य को पूरा करे। अपनी चेतनता एवं शक्ति को पहचानना सत्याग्रही का लक्षण है।

इस प्रकार गांधीजी से प्रतिपादित तत्त्व हमें विशेष रूप से विलग नहीं दीखते हैं। वे हमारे दैनिक जीवन में मानवीय आदर्शों से जुड़ कर अखंड मानवता के निर्माण के लिए व्यक्ति को चेतनतायुक्त एवं शक्तिमान करते हैं।

एक ओर विभेदों के बीच सहिष्णुता की आदत डालने की कोशिश राष्ट्रसंघ करता है, तो दूसरी ओर अखंड मानवता के रास्ते में रोड़े साबित होने वाली विषमताओं और उनके आधार बने असत्य और हिंसा के निराकरण के लिए असत्य और हिंसा से भरे हुए राजनैतिक शासन, आर्थिक मर्यादाओं और सामाजिक बंधनों का उल्लंघन कर मानवता से परिपूर्ण सत्य, अहिंसा एवं समता पर आधारित समाज के निर्माण से लिए गांधीवाद प्रयत्नशील है।

गांधीजी के बाद गांधीजी की इस विचारधारा को लेकर ही सर्वोदय-आंदोलन आगे बढ़ रहा है।*

---

* तेलुगु "आर्थिक समता" से साभार। अनुवादक : अच्युतभाई

नयी तालीम के युग-कार्य

(धीरेन्द्र मजूमदार)

सन् '४४ में प्रास्ताविक भाषण करते हुए नयी तालीम-सम्मेलन में गांधीजी ने कहा था–"युग-युग की तात्कालिक समस्याओं का समाधान नयी तालीम की जिम्मेदारी है।" विनोबाजी-नयी तालीम को नित-नूतन बताते हैं। कालचक्र अविरत गतिशील है। नये-नये संशय, नयी-नयी समस्याएँ खड़ी होती रहती हैं, हर समय उनके समाधान का दायित्व नयी तालीम का है।

आज की समस्या है, अशांति के खतरे को दुनिया कैसे टाले ? नयी तालीम के शिक्षकों से हम कहना चाहते हैं कि दुनिया जो अशांति का खतरा टालना चाहती है, वह कैसे हो, यह बताना, इसका मार्ग निकालना नयी तालीम की जिम्मेदारी है।

स्पष्टतया इसके लिए नयी तालीम को शासननिरपेक्ष और शोषणमुक्त समाज कायम करना होगा। शासन और शोषण क्यों चलते हैं ? इसलिए कि मनुष्य जीवन-संघर्ष में विजय प्राप्त करना चाहता है। कार्य-संलग्नता और कर्तव्य-परायणता के बदले संघर्ष को जीवन का लक्ष्य मानना, सहयोगिता की जगह प्रतिद्वन्द्विता को उन्नति का मूल समझना और निर्बलों तथा असहायों को मदद पहुँचाने के मुकाबले उन्हें दबाने-गिराने को शक्तिमत्ता जानना आदि समाजव्याप्त दुष्टवृत्तियों और दुर्बुद्धि ने आज के मानव को शोषक एवं स्वार्थ पर दानव बनाने का अभियान प्रारम्भ कर रखा है। अतः नयी तालीम को सहयोगितामूलक समाज का निर्माण करना है।

शोषण का दूसरा कारण संग्रह-वृत्ति है। स्वयं पैदा कर जिन्दा रहने की शक्ति प्रकृति ने हमें दी है। हम दूसरे का शोषण न करें, तो संग्रह न हो पाये। ईश्वर ने मनुष्य को आवश्यकता दी, उसी अनुपात से उसकी पूर्ति की शक्ति दी। एक व्यक्ति अपनी ही कमाई से सारे परिवार को खिलाता है, तो फिर उसे दूसरों को लूटना ही होगा। फिर भी सामाजिक मान्यता के अनुसार वह इस शोषण में अपना दायित्व नहीं समझता। इसमें उसे अपना कुछ हाथ मालूम ही नहीं होता। वर्तमान समाज ने संग्रह को अपनी मान्यता प्रदान कर लोगों को लूटने का लाइसेंस दे रखा है। अतः विनोबाजी का कथन सर्वांशतः सत्य है कि सम्पत्ति का विसर्जन शोषण-मुक्ति का एकमेव कार्यक्षम उपाय है।

दूसरों को लूटे बिना भी अपनी परवरिश हम ढंग के साथ कर सकते हैं, नयी तालीम को यह दिखाना है। स्टैंडर्ड आफ लीविंग(जीवनमान)ऊँचा होना चाहिए। पर किसका ? राष्ट्रीय जीवन स्तर ऊँचा करने के नाम पर विशिष्ट वर्ग का जीवनमान बढ़ाने का अच्छा तिकड़म लोगों ने कर रखा है। राष्ट्रीय जीवन-मान को ऊँचाई पर ले जाने वाले ४ पैसे कमाने वाले की याद जो भूल जाते हैं, उसकी तह में प्रचलित विचारधारा की यही विडम्बना काम नहीं कर रही है, यह कौन कह सकता है ?

काका कालेलकर ने गांधीजी से पूछा था, "सर्वोदय कैसे होगा ?" गांधीजी ने जवाब दिया था—"अन्त्योदय से।" अंतिम व्यक्ति का जीवनस्तर बढ़ाना हो, तो सम्पत्ति-विसर्जन, संग्रह का निराकरण और स्वावलम्बी साधन से ही वह बढ़ेगा। शोषण के रहते, संग्रह को मानते, वह होने का नहीं।

मद्रास में एक बड़े शिक्षा-शास्त्री कहने लगे कि प्रत्येक स्वावलम्बन साधेगा, तो व्यक्ति को सांस्कृतिक विकास का अवकाश कब मिलेगा ? स्वावलम्बन को सांस्कृतिक विकास के मार्ग में बाधक समझने वाले इन प्रकाण्ड विद्वान् सज्जन को हमें बताना पड़ा कि सांस्कृतिक मिथ्याभिमान का विकास चाहे न हो पाये, पर वास्तविक सांस्कृतिक विकास की सर्वाधिक गुंजाइश तो नयी तालीम में ही है। जो सांस्कृतिक विकास अपनी निज की आवश्यकता पूर्ति-भर उत्पादन का अवकाश व्यक्ति को न दे, उस संस्कृति का विकास न हो, तभी अच्छा। नयी तालीम की जिम्मेदारी है कि ऐसी गलतफहमियों का सजीव उदाहरण उपस्थित कर लोगों के दिमाग से निकाल बाहर करे।

सांस्कृतिक विकास के लिए मानवता का विकास जरूरी है। हम हरएक को नित्य ४ घंटे स्वाध्याय के लिए देने की तरकीब निकालें या २ घंटे में ही उसे पूर्णतया सम्पन्न करें। अन्यथा नयी तालीम नयी तालीम नहीं, असुर विद्या है। ६ घंटे उत्पादन करना यदि जरूरी हो, तो २ घंटे में सांस्कृतिक और बौद्धिक विकास कैसे करें, इसका रास्ता भी हम नयी तालीम वाले निकालें।

नयी तालीम के सामने आज ये समस्याएँ हैं। पहला प्रश्न जन-समाज में शांति की सच्ची चाह, भूख पैदा करने का है, जो शोषण का अस्तित्व रहते संभव नहीं। व्यक्ति व्यक्ति का तथा एक वर्ग दूसरे वर्ग का शोषण न कर सके, समाज को यह रूप नयी तालीम दे।

इसके लिए क्षमता के बदले समता को समाज-रचना का आधार बनाना होगा। इसकी प्रक्रिया नयी तालीम सोच निकाले। इसकी टेकनिक हमें बतानी है। सबको समान अवसर देने की पद्धति-टेकनिक-क्या होगी ? इस समस्या पर आप लोगों को चिंता करनी है। राष्ट्रीय शिक्षा का अर्थ सौ प्रतिशत की शिक्षा होनी चाहिए. जिसमें दस प्रतिशत ही शिक्षा पा सकें, वह राष्ट्रीय शिक्षा नहीं। यदि यह सब करना हो, तो उपयुक्त अध्यापक भी हमें बनाने, तैयार करने पड़ेंगे। बढ़ई का मूल बल बसूला है, उसी तरह नयी तालीम के लिए भी प्रथम तैयारी अध्यापक की करनी होगी।*

---

* नयी तालीम-संमेलन, सेवापुरी में ता० १२-१० को किये भाषण से।

प्रजातंत्र में शक्ति का अधिष्ठान

(जो० कॉ० कुमारप्पा)

राजनीतिज्ञ हमेशा कहते हैं कि प्रजातंत्र में शक्ति का अधिष्ठान आम प्रजा है। सिद्धांत के तौर पर यह उक्ति एकदम सत्य हो सकती है और इसीके आधार पर बहुत से लोग, खासकर लोकसभा के सदस्य, अपनी आँखे मंद लेते हैं और प्रमुख राजनीतिज्ञों को देश का कारोबार सौंप देते हैं। हमारे देश में बहुत कुछ यही हालत है। आज दूसरी पंचवार्षिक योजना कि तूती बहुत बोल रही है, इसलिए हम कुछ सिद्धान्तों की ओर अपनी सरसरी नजर डालते हैं।

इसमें कोई शक नहीं कि हमारे बेचारे मतदाता अपनी इच्छा से लोकसभा के प्रतिनिधियों को चुनते हैं। पर इसके बाद सालों तक वे यह भूल जाते हैं कि उन्होंने किसे प्रतिनिधि के तौर पर चुन दिया है और वे अपनी खेती या अन्य गुजर-बसर के व्यवसाय में व्यस्त हो जाते हैं।

इधर धूर्त राजनीतिज्ञ अपनी पैंतरेबाजी से सत्ता-स्थान के काबिज हो जाते हैं, राज्य का कारोबार चलाने लगते हैं और मामूली नागरिक को इसका कोई ज्ञान नहीं होने देते हैं। राजनीतिज्ञ कई किस्म के नारे प्रस्तुत कर अपने सच्चे "मालिकों को" सुला देते हैं। हमारे राष्ट्रपति आम जनता के नुमाइन्दे हैं, पर आम जनता की हालत से कोई मेल न खाने वाली शानो-शौकत और रईसी से वे रहते हैं। राज्य के कारोबार को देखने के लिए प्रधान मंत्री, मंत्री, उपमंत्री आदि का ऐसा ताँता लग जाता है कि राज्य की आमदनी का बहुत बड़ा हिस्सा इनकी तनख्वाहों में ही हड़प हो जाता है। ये ऐसे हुक्म जारी करते हैं, जिनसे लोगों की उत्पादन-क्षमता दब जाती है और इसका दोष मढ़ा जाता है देश के संविधान पर।

चावल की मिलें पौष्टिक तत्त्व नष्ट करती हैं और बेकारी फैलाती हैं। पर उन्हें तरजीह इसलिए दी जाती है कि संविधान में छोटे उद्योगों में कोई भेद-भाव नहीं किया गया है और योजना में छोटे उद्योगों को बढ़ावा देने का पुरस्कार किया गया है। चावल की मिल एक छोटा उद्योग है। उसके कारण बेवाओं का तथा बूढ़ी स्त्रियों का एक गृहोद्योग छिन जाता है और उन्हें भीख माँगने पर मजबूर किया जाता है। मंत्री लोग तक इसका कोई इलाज नहीं करते और वे कहते हैं कि हम लाचार हैं !

संक्षेप में हमारे देश की आज की हालत ऐसी है। यदि संकटग्रस्त लोगों को कोई प्रजातंत्र राहत नहीं पहुँचा सकता हो, तो उसके कोरे गुणगान करना फिजूल है। समय आ गया है कि नागरिक चेतें और राज्य के कारोबार की लगाम अपने हाथ में लें। घूसखोरी, भ्रष्टाचार और सिफारिशी टट्टूओं का बोलबाला मानों राष्ट्र की बुनियाद ही कुरेद रहे हैं। शाहनशाह, राजा और युवराज आदि का बड़े समारोह और शान से स्वागत किया जाता है और इनमें पानी जैसा पैसा खर्च किया जाता है। इनके सामने के विविध खाद्य-पदार्थों से लदे टेबल देख कर ये राजा-महाराजा हमारे देश ने कैसी प्रगति की है इसकी प्रसंशा के पुल बाँधते हैं और उधर देश की सच्ची जनता अपनी टूटी-फूटी झोंपड़ी में भूखी ही पड़ी रहती है। ऐसा कब तक होता रहेगा ? क्या हम सचमुच में विदेशी शासकों का इस तरह स्वागत करने की ताकत रखते हैं ? क्या हमें अपने ही देशवासियों की हालत सुधारने की कोशिश नहीं करनी चाहिए ? देश के खजाने में पैसा तो आम जनता से आता है, फिर क्या इन अतिथियों को उसने न्योता दिया है ? क्या प्रजातंत्र की सत्ता का यही सच्चा अधिष्ठान है ?

('ग्राम उद्योग पत्रिका' से)

निधि-मुक्ति के बाद : अष्टविध कार्यक्रम

(विनोबा)

निधि-मुक्ति की योजना हमारे मन में एक-दो साल से चल रही थी। उसकी चर्चा भी कई मित्रों से की थी। एक दफा उसकी चर्चा राष्ट्रपति पूज्य राजेन्द्रबाबू से भी हुई थी।

हर परिवार से

हमने विचार रखा था कि एक परिवार अपना एक भाई सार्वजनिक सेवा में दे और बाकी के भाई उसकी सेवा करें। यह सुन कर राजेन्द्रबाबू ने कहा कि 'उसका मुझे भी अनुभव है। मेरे घर में मेरे भाई वगैरह घर सम्हालते थे, इसलिए देश-सेवा के लिए मैं मुक्त रह सका। अगर उन्होंने मेरी जिम्मेवारी नहीं उठायी होती, तो मैं इतना मुक्त नहीं रह सकता था।' यह बहुत बड़ी भारी मिसाल आप लोगों के सामने आ गयी। आप उसका अनुकरण कर सकते हैं। ऐसे कई लोग हैं भी।

रचनात्मक कार्यकर्ताओं से

दूसरा यह हो सकता है कि सारे रचनात्मक काम करने वाले लोग अपने अपने कामों में लगे हुए हैं। उनकी जीविका की योजना भी उनके निर्माण के कार्य में से होती है। तो अपने निर्माण-कार्य का एक हिस्सा, रचनात्मक कार्य का एक हिस्सा भूदान को भी वे समझ लें। गाँव-गाँव में ग्रामदान, भूदान हुआ, तो उसके आधार पर बहुत अच्छा निर्माणकार्य हो सकता है। वे अपने काम के साथ भूदान का भी काम करते चले जायँ। उसके वास्ते कोई खर्चा नहीं होगा और भूदान के जरिये निर्माण का काम ज्यादा तेजस्वी बनेगा। यह है रचनात्मक काम करने वालों की मदद का विचार।

सर्वोदय-मित्र-मंडली से

तीसरी योजना यह हो सकती है कि कुछ मित्रमंडली सर्वोदयप्रेमी हैं, लेकिन वे सारे किसी न किसी व्यवस्था में लगे हुए हैं। उनको अपना घर-संसार चलाना पड़ता है। वे चाहते हैं कि भूदान के लिए समय दें, परंतु समय नहीं दे पाते हैं, तो वे अपने में से एक मनुष्य को सार्वजनिक सेवक के तौर पर नियुक्त कर सकते हैं। उसके लिए अपनी-अपनी संपत्ति का एक-एक हिस्सा दे। एक मनुष्य की आजीविका के लिए जितना आवश्यक है, उतना देने की योजना करे। मित्रमंडली के तरफ से एक मित्र काम करता है। इस तरह जगह-जगह से मित्र मंडली एक मित्र भूदान के लिए दे सकती है।

शिक्षकों से

चौथी योजना यह हो सकती है कि जगह-जगह की शालाओं के शिक्षक सर्वोदय का उत्तम अध्ययन कर सकते हैं और विद्यार्थियों को उसमें प्रवीण बना सकते हैं। फिर अपनी-अपनी तनख्वाह में से थोड़ा-थोड़ा हिस्सा देकर एक विद्यार्थी को भूदान के लिए तैयार कर सकते हैं। इस तरह करेंगे, तो बहुत सारे लोग भूदान में मिल सकते हैं।

राजनीतिक पक्षों से

पाँचवीं योजना यह हो सकती है कि जो बड़ी राजनैतिक संस्थाएँ हैं, वे सब भूदान को मानती हैं। वे अपने में से कुछ कार्यकर्ताओं को भूदान के काम का जिम्मा दे सकती है। तमिलनाड की प्रांतीय काँग्रेस-कमिटी ने वैसा किया है। उन्होंने भूदान के काम के लिए श्री गिरि महाराज को छोड़ दिया है। वे बहुत सारा समय भूदान को देते हैं और प्यार से काम करते हैं। वैसे ही एक जिला और तहसील की तरफ से एक मनुष्य का नियोजन हो सकते हैं। इस तरह बड़ी-बड़ी संस्थाएँ भूदान के काम के लिए एक-एक मनुष्य दे सकती हैं।

दस गाँवों की इकाई से

छठी योजना यह हो सकती है कि गाँव-गाँव के लोग काम कर सकते हैं। वे अपने अनाज का एक हिस्सा भूमिहीनों के वास्ते दें और एक हिस्सा ऐसे कार्यकर्ता के वास्ते दें कि जो गाँव के हित में काम करता है। मान लीजिये कि दस गाँव के लिए एक कार्यकर्ता काम करता है, तो उसको महीने पचास रुपया चाहिए। उससे ज्यादा न दें। बहुत बड़े परिवार का मनुष्य तो आयेगा नहीं, इसलिए उसके पेट के लिए और उसके परिवार के लिए उतना काफी है। रुपये का सवाल नहीं, अनाज भी दे सकते हैं। दस गाँवों की तरफ से एक कार्यकर्ता हो, तो हर गाँव पर पाँच रुपये का जिम्मा आ सकता है। अगर वह कार्यकर्ता दस गाँवों की उत्तम सेवा करता हो और हर तरफ से गाँव की मदद में आता हो, तो महीना पाँच रुपये का बोझ ज्यादा नहीं है। वह कार्यकर्ता राजनीतिक झमेले में नहीं पड़ेगा, वह चुनाव में भाग नहीं लेगा, वह अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, अस्तेय का व्रत लेकर काम करेगा, उसकी आवश्यकता कम से कम होगी, वह लोकनीति में मानने वाला होगा, सेवा के लिए ही सेवा निष्काम भावना से करेगा। लोगों की सतत सेवा करता रहेगा, तो लोग उसको अच्छी तरह पहचानेंगे और फिर तो वह गाँव के लोगों का सेवक होगा। कोई कठिनाई आयी, तो उनके सामने रख सकते हैं। उसका जिम्मा उठाना दस गाँव के लिए कठिन नहीं है।

दानदाताओं से

सातवीं योजना यह हो सकती है कि अभी तक करीब-करीब पाँच लाख लोगों से ज्यादा लोगों ने दान दिया है। दाता अपनी एक टोली बनाये, वे दूसरे के पास जाकर दान माँगें। सबके सब दाता तो नहीं लग सकते हैं, क्योंकि कुछ दाता घर के काम में लगे हुए हैं और इसमें समय नहीं दे सकते हैं, परंतु सौ में से एक मनुष्य भी मिल जाय तो भी पाँच लाख दाताओं में से ५००० कार्यकर्ता मिल सकते हैं। यह बहुत बड़ी भारी शक्ति है। बाकी के लोग पूरा समय नहीं दे सकते हैं, तो कुछ न कुछ समय दे सकते हैं। ऐसे दानदाता अगर इस काम का जिम्मा उठायेंगे, तो बहुत बड़ी भारी शक्ति पैदा होगी।

व्यापारियों से

व्यापारी लोग भी उसमें योग दे सकते हैं। वे गाँव का अनाज खाते हैं, तो उनको गाँव की सेवा करनी चाहिए। एक व्यापारी एक कार्यकर्ता की योजना कर सकता है, तो उसको सार्वजनिक सेवा का पुण्य सहज मिल सकता है।

इस तरह कार्यकर्ताओं का एक समूह खड़ा करने के अनेक प्रकार हो सकते हैं। जनआधारित, सर्वजन के आधार पर जो कार्यकर्ता खड़े होंगे, वे अच्छे ही होंगे। अगर वे अच्छे नहीं होंगे, तो लोग उनको मदद नहीं करेंगे, इसलिए वे सेवक सब दृष्टि से अच्छे ही होने चाहिए। इस तरह निधि का आधार तोड़ने का जो निर्णय हुआ, वह बहुत ही लाभदायी है।

छत्रमपट्टी, मदुरा, २४-११-'५६

नया और पुराना पुण्य !

गांधीनिधि गांधीजी की स्मृति के लिए खड़ा किया गया था। भूदान-यज्ञ के जरिये गांधीजी की स्मृति बहुत अच्छी तरह प्रकट होती थी, इसलिए गांधीनिधि वाले बहुत प्रेम से इस काम के लिए पैसा देते थे और उसमें उनको बहुत खुशी थी, परंतु उस निधि का उपयोग न करने का ही सर्व-सेवा-संघ ने तय किया, क्योंकि वह एक संचित निधि है, पहले से इकट्ठा किया हुआ। पुराने पुण्य के आधार पर जो मनुष्य काम करता है, उसका नया पुण्य हासिल करने का मार्ग कभी-कभी कुंठित हो जाता है। इसलिए संचित निधि का आधार छोड़ दिया और लोगों का आधार लिया। वैसे वैतनिक लोग थोड़े थे। ज्यादा लोग अवैतनिक ही थे। इतना था कि वैतनिक लोग पूरा समय देते थे और अवैतनिक सेवक जो वैतनिक से दसगुना थे, वे आंशिक समय देते थे। इन अवैतनिक सेवको में भी पूरा समय देने वाले काफी लोग थे, लेकिन आंशिक समय देनेवाले भी काफी थे। अब वह भेद हम मिटाना चाहते हैं। कुछ लोग भूदान के सेवक बन जायँ और जो पूरा समय दे सकते हैं, वे पूरा समय दें और जो आंशिक दे सकते हैं, वे आंशिक दें। लोग ही इस आंदोलन को उठायें।

(छत्रमपट्टी, मदुरा २४-११-'५६)

बाँट-बाँट कर खाना है !

रस्सी एकदम काटनी होती है। उससे त्वरित नैतिक शक्ति प्रकट होगी। लोगों का यह निरा भ्रम ही है कि वैतनिक कार्यकर्ताओं द्वारा आंदोलन चल रहा है। तमिलनाड में पाँच सौ कार्यकर्ता काम कर रहे हैं, कम-अधिक समय देकर, जिसमें मुश्किल से ५० कार्यकर्ता वैतनिक होंगे। लेकिन आज हिन्दुस्तान में बेकारी बहुत है, अतः किसी को कुछ काम मिला, तो जनता का ध्यान उधर चल जाता है। हम भी इस भ्रम में हैं कि वैतनिक कार्यकर्ताओं के बिना काम नहीं चलेगा। परंतु हम यह सब भ्रम तोड़ दें और जाहिर कर दें कि सन् '५७ नजदीक आ रहा है, अतः ३१ दिसम्बर को सब वेतन खतम हो जायगा। बजट वगैर कुछ पेश नहीं करना है। प्राप्ति के दूसरे रास्ते सूझे हैं और सूझेंगे। संपत्तिदान भी सूझेगा, लेकिन सूत्रांजलि और सूत्रदान के सामने वह फीका है। इतनी शक्तिशाली चीज हमारे पास पड़ी है। परन्तु पुराना ढाँचा छोड़ कर नयी राह हम नहीं ढूँढ़ना चाहते। इसलिए १ तारीख मुकर्रर करके ही निधि वगैरा सब बन्द करना होगा। इससे काम बन्द पड़ेगा, ऐसी शंका करते हैं। पर कुछ भी बिगड़ने वाला नहीं है। हम सब एक-दूसरे को संभालेंगे। किसी का त्याग नहीं करेंगे। जो कुछ है, बाँट कर खायँगे, यह सोच कर हम करें। इसके बिना शक्ति नहीं बनेगी।

(पलनी, मदुरा, २१-११-'५६) —— —विनोबा

भूदान-यज्ञ

७ दिसंबर सन् १९५६

संचीत नीधी का आधार छोड़ने के बाद ?

(वीनोबा)

हींदुस्तान में अेक बड़ी 'अींस्टीट्यूशन' है। वह 'अींस्टीट्यूट' (वीधी) और 'अींस्टीट्यूशन' (संस्था), दोनों है। अुसको "भीक्षा" कहते है। दूसरे देशों में भीक्षा मांगना गुनाह है, पर यहां अगर अुसे गुनाह क़रार दीया जाय, तो धर्म ही गुनाह माना जायगा! क्योंकी भीक्षा मांगना ही यहां कुछ लोगों का धर्म है!

'भीक्षा' में अेक खूबी है। हम कीसी अेक शख्स का खाते है, तो अुसके पाप-पुण्य का बोझ हमारे सीर पर आता है। परंतु सबके घर से थोड़ा-थोड़ा मीलता है, तो वह बोझ नहीं रहता।

लेकीन भीक्षा का अर्थ बीना काम कीये मांगना नहीं है! भीक्षा अलग है, भीख अलग। भीक्षा तो धर्म है। मज़दूर तो आठ आने का काम करेगा और आठ आने ही पायेगा, पर भीक्षा मांगने वाला दो हजार रुपये की सेवा करेगा और खायेगा आठ ही आने का! अीसीका नाम है, भीक्षा!

शंकराचार्य, रामानुज, माणीक्यवाचकम् अैसे ही घूम-घूम कर भीक्षा मांगते थे। अेक बार रामानुज अेक घर गये, तो द्वार बंद था। अुन्होंने भजन गाना शुरू कीया:

"हे लक्ष्मी देवी! भगवान् वीष्णु का दास तुम्हारे द्वार पर आया है। तुम आओ और भीक्षा दो!"

गृहीणी ने आकर श्रद्धापूर्वक भीक्षा दी!

आचार्य-शीरोमणी और संन्यासी रामानुज ने अुसे साधारण स्त्री नहीं, लक्ष्मी माता माना! मनुष्य में भगवान् को आरोपीत करने वाले को फीर कोअी पाप नहीं लगता! जीसने हमें खीलाया, वह साधारण मनुष्य नहीं; भगवान् वीष्णु ही है, यह बात जीसके दील में पैठी, अुसे सारे वीश्व में वीष्णु का ही अन्न खाने को मीलेगा! नारायण के सेवकों को हमेशा अीस भीक्षाकार्य का अधीकार है। बुद्ध, महावीर, चैतन्य, नानक आदी की और अुनके हजारों शीष्यों की यात्राअें अीसी आधार पर चलीं!

तो, जो आधार हमारे पूर्वजों ने हमें दीया, वह आज भी कौन छीन सकता है? अीसलीअे अीसके आगे अीसी योजना से आंदोलन चलेगा। जमीन भी लोग ही देंगे और कार्यकर्ताओं के लीअे आधार भी लोग ही होंगे!

जो अपनी जमीन का हीस्सा तोड़ कर देते है, क्या वे कार्यकर्ताओं के खाने-पीने की साधारण योजना भी नहीं करेंगे? तो, कार्यकर्ताओं के लीअे हमने यह बड़ा भारी नीधी खोल दीया है!

(ओडुगछत्रम्, मदुरा, २५-११.)

अहिंसा के लिए त्रिविध निष्ठा आवश्यक: १.

(विनोबा)

(पलनी की सर्व-सेवा-संघ की सभा में २०-११-'५६ को किया हुआ भाषण)

धर्मपुरी के तीन महीने बाद अभी हम मिले। इन तीन-चार महीनों में दुनिया में और हिन्दुस्तान में कभी कई ऐसी घटनाएँ घटीं कि जिससे हर एक मनुष्य के हृदय में तीव्र प्रतिक्रियाएँ पैदा हुईं। इंग्लैंड के इतिहास में यह पहला प्रसंग था, जब कि दूसरे देश के साथ लड़ाई बिना राष्ट्र की सम्मति लिये, पक्षनिष्ठ बहु-संख्या के आधार पर छिड़ी। 'डेमाक्रेसी' के लिए यह बहुत बड़ी चिन्ता की बात हुई। उसके साथ-साथ यह भी एक आशादायक लक्षण देखने में आया कि इंग्लैंड के लोगों ने अपनी आवाज खुल कर उठायी। ऐसे ही हंगेरी वगैरह में जो हुआ है—उसके बारे में बहुतसा हम जानते ही नहीं है—वह भी बहुत चिन्ताजनक है। दुनिया की हालत कभी विशेष भयानक रूप में दृष्टिगोचर होती है, कभी इतनी दृष्टिगोचर नहीं होती। पर यह हमको समझना चाहिए कि चाहे वह दृष्टिगोचर होती हो, चाहे न होती हो, वस्तुतः वह भयानक है ही।

भारत में गोलीकाण्ड

इधर जब हम हिन्दुस्तान की तरफ देखते हैं, तो तीन-चार महीनों में जो कुछ हुआ है, वह और उसके पहले जब से एस. आर. सी. (S. R. C.; राज्यपुनस्संघटन आयोग) वाला मामला शुरू हुआ तब से जो घटनाएँ घटी हैं, वे उतनी ही चिन्ताजनक हैं जितनी ये दुनियावाली। विशेष करके जब अहमदाबाद की घटना घटी, तो मुझे कबूल करना चाहिए कि मेरी कल्पना में वह बात नहीं आयी थी। हिन्दुस्तान में बिहार को छोड़ दें, तो विशेष अहिंसा-परायण मनुष्य गुजरात में हैं। गांधीजी के कारण वहाँ एक निष्ठा बनी है। उसके बावजूद वहाँ घटनाएँ घटीं। जब मैं घटनाओं का जिक्र करता हूँ, तो जिन दोनों बाजू से जो घटनाएँ घटीं, उन दोनों बाजू से मेरा मतलब है। गोलियाँ चलीं, गोलियाँ चलाना कर्तव्य था, यह मान कर चलीं। उसकी, पीछे से, कुछ तहकीकात करने की जरूरत नहीं मानी गयी। यह कोई अहमदाबाद की गोली की बात नहीं है, न यह बम्बई की गोली की बात है। बम्बई राज्य में इन सात-आठ सालों में लगातार बीसों दफा गोली चली। मैं जरा हिसाब जितना कम हो सकता था, कम करने के लिए सोचता रहा। लेकिन कभी भी उसकी तहकीकात नहीं की गयी। और सबसे दुःख इस बात का होता है कि यह 'हम' ही करते हैं, दूसरे नहीं। 'हम' से मेरा मतलब है, गाँधीजी की तालीम को मानने वाले। इसलिए व्यक्तिगत तौर से मैं जिम्मेवार हूँ या और कोई जिम्मेवार है, यह सोचने में कोई सार नहीं। अपने मंडल में एक ऐसा विचार आ गया है, जो बहुत पुराना है और इसके लिए कुल दुनिया के आध्यात्मिक और धार्मिक साहित्य में से उतने ही अनुकूल वचन हम दिखा सकते हैं, जितने कि अहिंसा के पक्ष में दिखा सकते हैं। मानना ही है तो मौके पर गोली चलाना उचित है, ऐसा शास्त्र के वचनों के आधार पर मान लें! या हमारी परिस्थिति का हमें जो ज्ञान है, उसके अनुसार यह जरूरी है, ऐसा भी मान लें! परन्तु यह हम नहीं मान सकते कि यह चीज़ सर्वोदय-विचार या गाँधी-विचार में बैठ सकती है। हमको बहुत हिचकिचाहट होती है, जब हम कभी गाँधीजी का नाम लेते हैं। हम इस दलील में नहीं पड़ेंगे कि गाँधीजी होते तो भी शायद इसका बचाव करते या इसे आशीर्वाद देते। जो जिस तरह मानना चाहता हो, उस तरह मानने का उसे अधिकार है। परन्तु हमें भी अपना मानने का अधिकार है। तो हम यह मानते हैं कि यह चीज़ गाँधी-विचार के बिल्कुल ही विरुद्ध है। पर हम गाँधी-विचार को भी छोड़ दें, तो हम कहना चाहते हैं कि यह विचार किसी तरह से हमारे दिल में नहीं बैठता है। हमने महाभारत भी पढ़ा है, जिसमें इसकी बहुत छानबीन की गयी है। उस सबके बावजूद इसका हम बचाव नहीं कर सकते कि गोलियाँ चलें और किसी भी मौके पर उसकी तहकीकात न हो। तहकीकात करके क्या करना है, हमसे पूछेंगे लोग! तो हम तो किसी को कोई सज़ा देने के पक्ष में हैं ही नहीं। हमने तो कहा था कि चोर चोरी करता है, तो उसकी सज़ा यही हो सकती है कि तीन साल की सजा देने के बजाय उसे तीन एकड़ जमीन दी जाय। इसलिए हम तो किसी को सजा दिलाने में दिलचस्पी नहीं रख सकते। परन्तु एक चीज को ऐसे ढाँका जाय, उसका बार-बार बचाव किया जाय, बचाव में गलत दलीलें भी पेश की जायँ—यह सब हृदय को बहुत ही वेदना देता है।

पक्ष-निष्ठा के कारण सत्य पर पर्दा!

लोगों ने हिंसा की, यह तो स्पष्ट है। आखिर लोग तो लोग ही हैं। उनको प्रजा-जन के नाते ही माना जायगा। हम जो जिम्मेवार नेता, राज्य-कर्ता या समाज के सेवक हैं, उनकी विशेष, अधिक जिम्मेदारी मानी जायगी। तो जब हम जैसे ही

लोगों से ऐसे काम होते हैं और उनका बचाव भी होता है, तो बड़ी वेदना होती है। इससे भी ज्यादा वेदना मुझे इसलिए होती है कि कई लोग—इसमें कांग्रेस के हमारे वे मित्र भी शामिल हैं कि जिनके हाथ में कुछ सत्ता है—व्यक्तिगत तौर पर कहते हैं कि तहकीकात होनी चाहिए। पर वे वैसा जाहिर नहीं कर सकते। जाहिर में बोल नहीं सकते। इसमें जो सत्य की हानि होती है, वह हमको, दूसरी जो मनुष्य-हानि इत्यादि हुई, उससे बहुत ज्यादा भयानक मालूम होती है। पर इसमें भी हम उनको दोष नहीं दे सकते—अपने से उन्हें अलग समझ करके; क्योंकि वे इसको सत्य-निष्ठा का एक अंग मानते हैं। हर मनुष्य को, जिस तरह से वह अपने को समझता है, वैसा हमको समझ लेना चाहिए। हम समझते हैं कि इस तरह मौके पर न बोलना और लोकमत वैसा न तैयार करना सत्य के लिए हानिकारक है। पर वे यह समझते हैं कि पार्टी की एक निष्ठा होती है। अपनी पार्टी ने एक काम किया है। वह गलत है तो आपस-आपस में चर्चा इत्यादि कर लें। लेकिन पार्टी के हमारे मुखिया उस बात के लिए तैयार नहीं, तो यह चर्चा वहीं छोड़ दें। आम जनता में वैसा न बोलें, पार्टी के खिलाफ न बोलें। आपस-आपस में जरूर कुछ बोलना है तो बोलें। जाहिरा तौर पर बिल्कुल ही न बोलें, यह सत्यनिष्ठा का एक अंग माना जाता है, क्योंकि वे पार्टी में दाखिल हैं! तो इसलिए इन दिनों पार्टी के लिए पहले से ही हमारे मन में प्रतिकूल भावना है, और यह सारा दृश्य देखा, तो उससे और भी प्रतिकूल भावना हममें उत्पन्न हो गयी। हम मानते हैं कि वे लोग, जो इस बात को छिपाते हैं, अपने विचार प्रकट नहीं करते, इसमें उनकी सीमित सत्य-निष्ठा है, यह हम मान्य करते हैं। जिसे हम 'लॉयल्टी' (पक्षनिष्ठा) कहते हैं, वह भी सत्यनिष्ठा का एक प्रकार है। परन्तु सत्यनिष्ठा का यह प्रकार परम सत्य को काटने वाला है। इसलिए उसका त्याग ही करना चाहिए और ऐसी पक्षनिष्ठा, जो सज्जनों को भी उनके जाने बगैर ही दुर्जन बनाती है, वे जानते भी नहीं कि हम दुर्जन बन चुके हैं, वह हमको बहुत ही भयानक मालूम होती है। एक माया जिसे हम कहते हैं, ऐसी ही वह एक माया-सी है। तो, इस तरह सत्य पर भी प्रहार आया और अहिंसा पर भी प्रहार आया। और उस हालत में हम यह कहें कि हिन्दुस्तान की आवाज अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अहिंसा के पक्ष में होनी चाहिए या उसने जो कुछ किया, उसका परिणाम दुनिया में कुछ होना चाहिए, तो ये सब अपेक्षाएँ बिलकुल गलत मालूम होती हैं हमको। हमारी ऐसी आवाज़ का कोई असर नहीं होगा।

अहिंसा के लिए सत्य जरूरी

'कॅमोफ्लाज' अथवा ढोंग का भी असर होता है, पर अहिंसा की योजना में इसका कोई असर नहीं हैं। हिंसा की योजना में उसका भी उपयोग है, उसका वहाँ स्थान है। पर अहिंसा तो तब फल देती है, जब कि उसमें सत्य होता है। अक्सर बोला जाता है कि हम पिछड़े हुए देश हैं। जैसे हिन्दुस्तान वैसे दूसरे एशिया के कई देश पिछड़े हैं। दुनिया में अगर हिंसा चलेगी, तो उनका विकास रुक जायगा। इस वास्ते कम से कम १०-१५ साल तो हमारे लिए शान्ति बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। वैसे हमेशा ही हम शान्ति चाहते हैं। लेकिन इस वक्त इसके बिना बिलकुल हमारा काम नहीं चलेगा। ऐसा अक्सर बोला जाता है। मुझे तो यह बोलना भी खतरनाक मालूम होता है। याने कुछ पिछड़े हुए देश हैं, उनके विकास के लिए शांति की जरूरत है, तो यह जो शान्ति की माँग है, वह शान्ति की 'प्यास' नहीं है। उस चीज की जरूरत है, इस वास्ते माँग है। अब इस तरह से माँग हम अपने मन में रखते हैं, तो हमारी नैतिक आवाज दुनिया में कुछ बलवान होगी, ऐसा नहीं है।

गोआ का मामला

गोआ का मामला है। यों देखें तो यह बिल्कुल छोटा-सा है, परन्तु वस्तुतः वह बहुत ही गहरा मामला है। कई मसले उसके अन्दर पेश हैं। हम नहीं चाहते हैं कि गोआ पर आक्रमण करें। हम मान लें कि हम उस पर आक्रमण कर सकते हैं, उसे हम जीत सकते हैं, फिर भी हम आक्रमण करना नहीं चाहते,. क्योंकि हमारी अहिंसा की नीति है। इसमें भी बहुत ज्यादा शान्ति की शक्ति भरी है, ऐसा नहीं। क्योंकि हमने पीसफुल मेज़र (शान्तिपूर्ण कदम) उठा लिया है। कहते हैं कि कुछ 'बाउण्डरी' सील कर दी है और कुछ व्यवहार भी रुक गया है शायद। अब यह तरीका 'पीसफुल' (शांतिपूर्ण) जरूर है, परन्तु इस तरीके में अहिंसा की शक्ति नहीं। याने इसके मूल में हमारा कोई सामने वाले के लिए प्रेम है, ऐसा नहीं है।

अहिंसा कैसे पनपेगी ?

अहिंसा की शक्ति तो तब प्रकट होती है, जब कि सामने वाला, जो दोषी माना जाता है, उसके लिए हमारे मन में कुछ प्रेम हो, और जो कदम हम उठाना चाहते हैं, वह उसकी उन्नति के लिए भी जरूरी है, ऐसा समझ करके ही हम उठाते हैं। इसमें हमारा तो भला है ही, पर उसका भी उसीमें भला है। और उसका भला करने के लिए ही हम यह कदम उठाते हैं, ऐसी जहाँ स्पष्ट भावना होती है, वहाँ अहिंसा की ताकत प्रकट होती है, जिससे कि सामने वाले का कुछ परिवर्तन होता है या होना सम्भव दीखता है। परन्तु हम एक 'निगेटिव'(निषेधात्मक)काम कर लें, साक्षात् लड़ाई के बदले, इस प्रकार का बहिष्कार हम कर लें, तो उससे शान्ति की शक्ति प्रकट नहीं होती। यह ठीक है कि हमने साक्षात् आक्रमण नहीं किया, साक्षात् इतनी मर्यादा हमने—हमारे राष्ट्र ने मान ली। कहना हम यह चाहते हैं कि जो 'निगेटिव' काम हम करते हैं, शान्ति की जरूरत है, इस वास्ते शान्ति की हम बात करते हैं। फिर हमारे समाज में गोलियाँ आदि चलाते हैं, उसका बचाव भी हमारे पास पड़ा है और उसका निषेध भी हम प्रत्यक्ष खुल कर नहीं करते। एक पार्टी के अन्दर शामिल है, इस वास्ते पक्षनिष्ठा के कारण नहीं करते।

हिन्दुस्तान में इतने सारे अखबार हैं, पर कितने अखबारों ने खुल करके इसका विरोध किया है। कुछ थोड़े मुट्ठी भर होंगे, जो कि हमेशा ही सरकार पर टीका करने वाले के नाते मशहूर हैं। इस वास्ते इनकी टीका की ज्यादा कदर नहीं होती, और बाकी बहुत सारे खामोश ही रहे। उसमें उनको ज्यादा दिलचस्पी नहीं है। तो यह सब मिल कर हमारे हिन्दुस्तान की जो एक वृत्ति प्रकट होती है, यह वृत्ति अहिंसा की ताकत निर्माण करने वाली नहीं है, यह हमको समझना चाहिए। इसलिए ऐसे मौके पर जब हम इकट्ठा होते हैं, तो मुख्य चिन्तन इस बात का होना चाहिए कि यह अहिंसा कभी पनपेगी या नहीं पनपेगी ? इसको हम सामने लाना चाहते हैं या किसी तरह से अपना निभा लेना चाहते हैं ? आज की राजनीति में, आज की परिस्थिति में हमारी निभ तो जायगी। हर जमाने की सरकार सज्जनों का बचाव कर ही लेती है, उनको पचा भी लेती है। उनको अपवाद स्वरूप भी मान लेती है। इंग्लैंड में कल 'कॉन्स्क्रिप्शन' (अनिवार्य सैनिक भर्ती) शुरू हो जाय तो भी जो 'कांशियंशस ऑबजेक्टर्स' (युद्ध को हराम मानने वाले) कहे जाते हैं, उन्हें छोड़ देते हैं। उतना उन्होंने मेल-जोल कर लिया है। तो वैसे ही हमारे जैसे चन्द लोगों को आज का समाज या आज की सरकार निभा लें और हमारा निभ जाय, यह हो सकता है। परन्तु उससे अहिंसा की शक्ति हिन्दुस्तान में बनेगी, ऐसा हम नहीं मानते।

अहिंसा-मूर्ति को शस्त्रोंसहित प्रणाम !

अभी प्यारेलालजी ने एक पत्र लिखा है। बहुत ही वेदनापूर्वक लिखा है। वहाँ दिल्ली में तीस जनवरी को बापू की समाधि के सामने सब लोग आकर प्रणाम करके जाते हैं। उसमें शायद मिलिटरी के लोग भी जाते हैं और वह शायद अपने वस्त्र के साथ ही जाते हैं! उस पर प्यारेलालजी ने सवाल उठाया है कि एक अहिंसा की मूर्ति, जिसे हम "युगावतार" कहते हैं, ऐसे मनुष्य के लिए अगर आदर बताना है तो अपने औजार जरा घर पर रख कर जायें, तो क्या हर्ज है? उन्हें लगता है कि यह प्रदर्शन हिंसा-शक्ति का है। परन्तु एक 'सिम्बल' (प्रतीक) की बात आयी। लेकिन इसे छोड़ देता हूँ मैं। उन्होंने और एक बात मुझे लिखी है कि तुम जरा इसकी तहकीकात करो कि शायद उत्तरप्रदेश की सरकार सोच रही है कि तालीम में लश्करी शिक्षण शुरू किया जाय! इसमें कोई संदेह नहीं है कि हिन्दुस्तान में हमारे देखते लश्करी तालीम स्कूलों में लाजमी की जाय, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। अब इन सबको रोकने में मान लीजिये हम असमर्थ साबित हुए और सिर्फ अपने जीवन का हमने बचाव किया, तो उतने से अहिंसा की ताक़त प्रकट नहीं होती। इस वास्ते हमें इन सब पर सोचना चाहिए।

सत्याग्रह की प्रक्रियाएँ

सौम्य, सौम्यतर, सौम्यतम; यह जो सत्याग्रह की प्रक्रिया है, जो कि हमारा वज्र कवच है, उसका हमें संशोधन करना चाहिए। उसके लिए चर्चा करनी चाहिए। उसके लिए ऐसे सम्मेलनों में भी समय देना चाहिए और स्वतंत्र रूप से मिल-जुल करके इस विषय की काफी छानबीन करनी चाहिए कि इन सबके लिए हमारे पास कोई उत्तर है या नहीं ? उत्तर जरूर होना चाहिए। अहिंसा में उत्तर नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। इसका हमें संशोधन करना होगा और उस दृष्टि से अधिक सौम्य, अधिक मृदु हमको बनना होगा। हमें अधिक सत्यनिष्ठ बनना चाहिए। तो मुझे लगा कि जो बाह्य कार्यक्रम हमने उठा लिया है, वह जरूरी ही है। उसके साथ-साथ वह कार्यक्रम भी जरा विचार के लिए एक बाजू रख कर, मानसिक चिन्तन इसका करें और इस प्रकार की तालीम हम लें और अपने भाइयों को भी इस प्रकार की तालीम हम दें।

मथुरा और आगरा जिले में बाबा राघवदासजी

(रामचन्द्र मेहरोत्रा)

ज्यों-ज्यों उत्तर प्रदेश में बाबा राघवदासजी की अखण्ड पदयात्रा समाप्ति की ओर बढ़ रही है और निर्धारण-वर्ष सन् १९५७ पास आ रहा है, त्यों-त्यों प्रदेश में कार्यकर्ता सघन पदयात्राओं के जरिये गाँवों में आन्दोलन को मजबूत करने के जुट पड़े हैं।

१६ अक्टूबर '५६ को भूमि-समस्या हल न होने तक अपने बरहज-आश्रम न लौटने और तब तक इसी प्रकार अखण्ड यात्रा करने की घोषणा बाबाजी ने की। इस संकल्प को कुछ ही दिन हुए थे कि दीपावली आयी। लक्ष्मी-पूजन का दिन था। साथी दुर्दशा-आक्रांत हरिजन-बस्तियों में गये। वहाँ लालटेन का प्रकाश तक न था। प्रसाद-स्वरूप सबको मिठाई खिला कर लौटे। यह सुन कर बाबाजी का भावुक हृदय रो उठा। हर सभा में उस गरीबी का जिक्र वे करते।

गोकुल नगरी में कृष्ण की बाल-लीलाएँ कभी गुंजायमान हुई थीं, पर आज दो हाथ, दो पैरोंवाले (हरिजन) प्राणियों को अवहेलना, उपेक्षा का भार बढ़ गया है। अहमदाबाद, बम्बई आदि नगरी के स्वामी वल्लभाचार्यजी के अनुयाइयों की ५२ धर्मशालाएँ यहाँ है, पर उनमें से किसी में भी हरिजनों का प्रवेश नहीं। मंदिरों में तो खैर है ही नहीं! केवल नन्द बाबा के मन्दिर में ही हरिजनों का प्रवेश था, अतः बाबाजी केवल वहीं गये।

मथुरा जिले के अन्तिम पड़ाव सिखरा से ता० १३ नवम्बर को आगरा के लिए प्रस्थान करना था। बड़े तड़के पाँच बजे प्रार्थना के बाद नित्य के कार्यक्रम के अनुसार प्रवचन देते हुए कार्यक्रम के बीच उन्होंने घोषणा की :

“गाँवों के बच्चों को दीवाली के दिन भी खाने के लिए मिठाई, गट्टा, बताशा नहीं मिल सकता और हरिजनों के घर में दिया जलाने के लिए तेल तक नहीं होता, त्योहार के अवसर पर भी जो वैसे ही सो जाते हैं। मेरे जैसा व्यक्ति यह साहस नहीं कर पाता कि वह मीठा ग्रहण कर सके। वह खा भी कैसे सकता है? इसलिए मैंने संकल्प किया है कि अपनी इस यात्रा में, सन् सत्तावन तक मैं किसी भी प्रकार का मीठा और मिष्टान्न की वस्तुएँ ग्रहण नहीं करूँगा।”

संकल्प की पार्श्वभूमि

मैंने अलीगढ़ जिले के आखिरी पड़ाव पर संकल्प किया कि भू-समस्या हल न होने तक आश्रम नहीं लौटूंगा। इसकी भूमिका मित्रों ने जाननो चाही। मैं उनसे निवेदन करना चहता हूँ कि यह संकल्प सोच-विचार कर किया गया है। मथुरा में तारीख २-११-५१ को हमने पाँच लाख एकड़ जमीन एकत्रित करने का संकल्प श्रद्धेय श्री विनोबाजी की उपस्थिति में किया था और जब वह उत्तर प्रदेश से बिदा हो रहे थे, तो उनकी सेवा में यह निवेदन किया था कि आपकी यात्रा में जो जमीन प्राप्त हुई, वह आपकी है और हमारा मथुरा का संकल्प ज्यों का त्यों कायम है। इसलिए वही पाँच लाख एकड़ जमीन का संकल्प हमें पूरा करना है और उसमें अभी एक लाख एकड़ भी पूरा नहीं हुआ है।

अलीगढ़ जिले से मथुरा जिले में प्रवेश करना था। इसलिए कई रोज चिन्तन चल रहा था कि संकल्प तो पूरा हुआ नहीं। अतः क्या करना चाहिए? अन्त में निश्चय हुआ कि यह प्रश्न हल न होने तक आश्रम न लौटने का संकल्प करना ही इसका प्रायश्चित्त है। यह इसलिए किया है कि भगवान् मुझे सद्बुद्धि दे कि इस संकल्प को पूरा करनें में समर्थ हो सकूं। जनता-जनार्दन तथा पंचों का आशीर्वाद चाहता हूँ।

(आगरा पड़ाव से)

—(बाबा) राघवदास

बाबाजी ने मथुरा जिले की अन्य आवश्यक बातों की ओर भी ध्यान दिया। राया नामक स्थान में कपास की प्रयोगशाला को देखकर कपास की विभिन्न किस्मों को देखा और उसके कार्य को सराहा। मथुरा में कपास काफी होती है, पर खादी का कोई उत्पादन-केन्द्र नहीं। अतुर्रा गाँव के सर्वोदय-आश्रम में एक बुनाई-केन्द्र है। बाबाजी ने इसे उत्पादन-केन्द्र बनाने की सिफारिश करते हुए जिले को खादी के मामले में स्वावलम्बी होने की अपील की।

४ नवम्बर को वे मथुरा नगरी में दुबारा प्रवेश कर नगर के बाहर बाहर आकर उत्तर प्रदेश के एकमात्र पशुसंवर्धन महाविद्यालय में अर्ध-पड़ाव के लिए रुके। कॉलेज में पशुओं की बीमारी, उनकी नस्लों में सुधार और पशुओं को दुधारू बनाने के लिए चारे के प्रयोग देखने में रुचि दिखायी और इस सम्बन्ध में अपने प्रश्नों तथा अनुभवों की महत्त्वपूर्ण जानकारी उन्हें बतायी। वहाँ का काम देख कर बाबाजी बहुत प्रभावित हुए। कृष्ण की नगरी में हर स्थान पर बच्चों की पंचायत करके बालक-बालिकाओं से भी उन्होंने पूछा, “आप लोगों में कितने ऐसे हैं, जो मक्खन खाते हैं?” एक भी हाथ नहीं उठ सका। उन्होंने कहा, “मैं जानता हूँ कि अगर बीड़ी पीनेवाले छात्रों से हाथ उठवाता, तो बहुत से हाथ उठ जाते! अगर एक हजार की आबादी का गाँव है, तो उसमें २०० आदमी तो बीड़ी-सिगरेट, पीते ही होंगे। दो आने रोज के हिसाब से साल में ४५ रुपये और २०० आदमियों के ९००० रुपये बीड़ी फूंकने में नष्ट हो जाते हैं! पर बच्चों को मक्खन नहीं मिलता!”

बाबाजी का ध्यान मथुरा और आगरा जिले में रेगिस्तान बढ़ने की ओर भी गया। इस सम्बन्ध में उन्होंने सिर्फ वन लगा कर ही उसे रोकना काफी नहीं समझा, क्योंकि एक तो सरकारी वनमहोत्सव-नीति का स्थानीय लोगों की ओर से स्वागत नहीं किया गया। दूसरे, प्रश्न यह है कि जहाँ पानी नहीं, वहाँ वृक्ष बढ़ कैसे सकते हैं? इस सम्बन्ध में उन्होंने जगह-जगह सलाह दी कि घास लगाने से भी इसमें सहायता मिल सकती है। बाबाजी ने दूसरे जिलों के बाढ़ादि के पानी का उपयोग कर लेने की भी सलाह दी और कहा : “हिमालय पर्वत की नदियाँ बाढ़ से हर वर्ष हजारों गाँवों को तबाह कर देती हैं, उनका पानी रेगिस्तान की ओर बहाने का पुरुषार्थ क्यों न कर दिखाया जाय? गंगा तथा यमुना में नहरें हैं। वर्षा-काल में उनका पानी खेतों के काम में नहीं लाया जाता। क्यों न वह रेगिस्तान में जाय?”

१३ नवम्बर को बाबाजी ने मथुरा जिले की २७ दिनों की पदयात्रा समाप्त कर आगरे जिले में प्रवेश किया। आगरा जिला राजनीतिक दलों और अपनी पार्टीबाजी के लिए विख्यात है, पर जब दूसरे दिन सुबह के समय सैमरा गाँव में तिरंगे झण्डों के द्वार और उसके नीचे लाल टोपी पहने सोशलिस्ट भाइयों ने बाबाजी का स्वागत किया, तब बाबाजी ने वहाँ के भाषण में कहा, “मैंने यहाँ तिरंगे झंडे का फाटक देखा और लाल टोपीवालों को स्वागत करते पाया, तो मुझे लगा कि मैं दोनों पार्टियों का कार्य कर रहा हूँ। लेकिन मैं तो सबका काम कर रहा हूँ। मुझे बड़ी खुशी हुई कि सबको विश्वास है कि हम सभी का काम कर रहे हैं और सब लोग हमारे साथ हैं।”

लेकिन अगले दिन आगरा नगर में प्रवेश करने से उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि मानों किसी दूसरी ही भूमि में आ गये हों। वहाँ के सभी बड़े नेताओं ने पूर्ण उदासीनता दिखायी और कार्यकर्ताओं की सभा में भी जो कार्यकता आये, उन्होंने कोई उत्साह प्रकट नहीं किया। कहा यह जाता है कि इस नगरी में अब तक सर्वोदय और भूदान सम्बन्धी सभी कार्यक्रम असफल हुए हैं। तब बाबाजी ने स्वीकार किया कि भूदान के काम में आगरा जिला उत्तर प्रदेश भर में सबसे पिछड़ा है और दरअसल यह नेताओं का नगर है और वे अपने-अपने स्वार्थों में रत हैं।

बाबाजी की परेशानी व कार्यकर्ताओं की उदासीनता से आगरा के एक कार्यकर्ता को ठेस-सी लगी। स्वामी कृष्णस्वरूपजी जिले के एक बड़े महात्मा व त्यागी साधु हैं, भूदान तथा किसानों के लिए बराबर काम कर रहे हैं। उन्होंने कार्यकर्ताओं की सभा में बाबाजी के सामने संकल्प किया कि वे पहली दिसम्बर से लगातार चार महीने की पदयात्रा करेंगे, एक दिन में पन्द्रह मील चलेंगे, तीन गाँवों में जायँगे और भूदान में जिस दिन जमीन नहीं मिलेगी, उस दिन अन्न-जल नहीं ग्रहण करेंगे।

इन दोनों जिलों में बाबा राघवदासजी ने ३६० मील की पदयात्रा की, जिसमें उन्हें मथुरा जिले से ३३३० रुपये साधनदान, ९६५ रुपये वार्षिक सम्पत्तिदान के रूप में और ४५० बीघे भूमिदान में मिला। साहित्य-प्रचार २९२५ रुपये का पदयात्री-दल ने और ९४० रुपये का मथुरा जिले के कार्यकर्ताओं ने किया। ४० ग्राहक बने। आगरा जिले में दस दिनों की यात्रा में २६ बीघा १० बिस्वा भूमि, ९७० रुपये का साधनदान और १६८ रुपये के सम्पतिदान पत्र प्राप्त हुए और साहित्य-प्रचार ४८० रु० का हुआ।

तमिलनाड की क्रांति-यात्रा से-

(निर्मला देशपांडे)

"जब तुम सारे बाह्य आधार छोड़ दोगे, तब तुम्हें वह परम आधार मिलेगा"— गत साल-डेढ़ साल से विनोबाजी सतत यही बात कह रहे थे। सर्व-सेवा-संघ की बैठक में उन्होंने अपने प्रज्ञाचक्षुओं को होने वाले क्रान्तदर्शन की, १९५७ में होने वाली महान् घटनाओं के चित्र की झलक दिखायी और ३१ दिसम्बर, १९५६ से सारे बंधन छोड़ कर नारायणाश्रित बनने का आदेश दिया, तब सर्व-सेवा-संघ ने सारे बाह्य आधार छोड़ कर वह परम आधार लेने का ऐतिहासिक निर्णय किया। अब १९५७ साल का प्रथम प्रभात बंधमुक्त नवजीवन का संदेश लायेगा। 'गांधी-निधि' की सहायता लेना समाप्त कर के भूदान-आन्दोलन स्वयं गांधीजी की ही सहायता लेना आरंभ करेगा, जो जनता के कोटि-कोटि हाथों द्वारा प्राप्त होगी। धनच्छेद तथा सर्वजनावलंबन के विस्फोट के इस निर्णय ने सारे वातावरण में नयी चेतना भर दी। कइयों को १९४२ के अगस्त के दिनों का स्मरण हुआ जब 'करेंगे या मरेंगे' के संकल्प से सारा भारत जाग उठा था। लेकिन इस क्रांति में तो, श्री शंकररावजी के शब्दों में, काम करते करते ही मरना है, किसी विदेशी सत्ता को 'चले जाओ' नहीं कहना है। अगर कहना ही है तो हम सबके हृद्देश पर सत्ता चलाने वाले ममत्व-मोहादि विदेशियों को ही 'चले जाओ' कहना है और वैदिक ऋषियों की कल्पना का स्वराज्य स्थापित करना है।

सर्व-सेवा-संघ का धनच्छेद का यह निर्णय कुछ अकल्पित और आकस्मिक-सा था। संघ की बैठक में बाबा ने अपने प्रथम भाषण में दुनिया की आज की परिस्थिति का चित्र खींचा, जिसमें यह कहा गया कि आज किस तरह हिंसा की ताकतें काम तो कर रही हैं, लेकिन फिर भी आज सारी दुनिया जाने-अनजाने अहिंसा की तरफ कैसे जा रही है। इसमें कोई अज्ञात शक्ति ही काम कर रही है। सत्य, अहिंसा तथा अपरिग्रह की निष्ठा निष्काम सेवा करने की वृत्ति और सब सकाम सेवकों को सहन करने की वृत्ति और लोकनीति में श्रद्धा—इस प्रकार चतुर्विध निष्ठावाले सेवकों की मांग उन्होंने की। देश के हर जिले के लिए इस तरह का चतुर्विध निष्ठा वाला सेवक हो, जो जिले के काम की जिम्मेवारी ले, ऐसी उन्होंने अपेक्षा प्रकट की। वहाँ पर उपस्थित नेताओं ने तथा सेवकों ने फौरन इस अपेक्षा की पूर्ति का आरंभ कर दिया। नेताओं के भाषण दो दिन तक चले। श्री शंकररावजी ने बताया कि शासन-मुक्ति की दिशा में भूदान-आन्दोलन किस प्रकार गांधीजी की विचार-धारा से एक कदम आगे बढ़ा है। अंतिम बैठक में विनोबाजी का वह 'भूकंप' का-सा भाषण हुआ, जिससे आज तक का सारा तंत्र उड़ गया।

पहाड़ियों से घिरी हुई पलनी नगरी दक्षिण भारत का एक बड़ा तीर्थक्षेत्र है। यहाँ एक ऊँचे पहाड़ पर पलनी स्वामी, भगवान कार्तिकेय का मंदिर है। यहाँ पर तमिलनाड के रंगबिरंगे वस्त्र पहनी हुई स्त्रियों से भी मलाबार की सफेद वस्त्र परिधान की हुई स्त्रियाँ अधिक दिखायी देती हैं। दक्षिण में यह वर्षा ऋतु होने के कारण आसमान में चलने वाले श्वेत, कृष्ण मेघों की क्रीड़ा यहाँ की नयनरम्य प्रकृति को अधिक आकर्षक बना रही थी। जगह-जगह पर कार्तिकेय का छोटा भाई बाल गणेश तथा भगवान का वाहन—मयूर दिखायी दे रहा था। दक्षिण का कार्तिकेय विवाहित है और उसकी दो पत्नियाँ हैं, जिनमें से एक वन्य जाति की है। गणेश ब्रह्मचारी हैं। विनोबाजी का निवास पहाड़ के निकटवर्ती स्थान में था। सर्व-सेवा-संघ की बैठक के लिए आये हुए नेता तथा सेवकों को 'आगम्यताम्' कह कर वे अभिवादन करते रहे। छह दिनों तक सतत भिन्न-भिन्न व्यक्तियों के साथ चर्चा होती रही।

× × ×

जयप्रकाशजी के साथ, आशियाई समाजवादी सम्मेलन के लिए आये हुए कुछ विदेशी नेता भी पलनी आये थे। उनमें अंतर्राष्ट्रीय समाजवादी संगठन के भूतपूर्व मंत्री, जो आस्ट्रेलिया के हैं और इन दिनों इंग्लैंड में रहते हैं, इंडोनेशिया के एक समाजवादी नेता तथा कनाडा की एक बहन थीं। विदेशी मित्रों ने भूदान-आन्दोलन के प्रति हार्दिक सहानुभूति प्रकट करते हुए कुछ सवाल पूछे। इंगलैंड के भाई ने कहा कि "आप सर्वोत्तम व्यक्तियों को राजनीति से अलग रहने के लिए कहते हैं, तो सरकार बुरे लोगों के हाथ में चली जायेगी।" इस पर बाबा ने कहा कि "समझने की बात यह है कि अक्सर सर्वोत्तम व्यक्ति आधुनिक चुनाव में पड़ते नहीं, क्योंकि वे अधिक चिंतनपरायण होते हैं, कृति-परायण नहीं। चिंतन से उन्हें ताकत मिलती है और वे सारे समाज का नैतिक स्तर ऊँचा उठाने का काम करते हैं। मेरा मानना है कि सर्वोत्तम व्यक्ति पार्लमेंट के अंदर दाखिल होकर देश पर जो प्रभाव डालेंगे, उससे अधिक प्रभाव वे बाहर रह कर डालेंगे। क्या मैं पार्लमेंट में जाऊँगा और किसी विरोधी पक्ष का सदस्य बनूंगा, तो मेरे विचारों का देश पर ज्यादा असर होगा? आज मैं एक स्वतंत्र, निष्पक्ष तटस्थ व्यक्ति के नाते जो बोलता है, उसका ठीक मूल्य आँका जाता है। लेकिन मैं किसी पक्ष के साथ जुड़ा हुआ होता, तो मेरे वक्तव्यों को पूर्वग्रहों के साथ ही देखा जाता। हम राजनीति से भाग नहीं रहे हैं, बल्कि उससे अलग रह कर उसे सुधारना चाहते हैं। हमारा मकसद है कि राजनीति का समूल नाश करके लोकनीति की स्थापना करें। हमें समझना चाहिए कि State (राज्य) unmixed evil है, इसलिए उसे मिटाने बगैर दुनिया में शांति नहीं हो सकती है।

इंडोनेशिया के भाई ने पूछा कि "हमारे देश में स्वराज्यप्राप्ति के पहले आदर्शवादी लक्षण काफी संख्या में दिखायी देते थे, परंतु अब सबके सामने सरकारी नौकरियों के तथा अन्य प्रलोभनं होने के कारण आदर्शवाद मिट-सा गया है तो किस तरह लोगों को आदर्शवाद की तरफ लाया जा सकता है?" विनोबाजी ने कहा, "मानव के हृदय में सतत भलाई और बुराई का संग्राम चलता रहता है। अगर मानव में सिर्फ बुराई ही होती, तो सत्याग्रह, सर्वोदय आदि के लिए कोई आधार ही नहीं रहता। हम मानते हैं कि मानव स्वभावतः समाजप्रेमी और अच्छा है और उसमें बुराई की शक्ति पर विजय पाने की शक्ति है। संपत्ति आदि के आकर्षण मानव के स्वभाव में नहीं है, बल्कि परिस्थिति के कारण पैदा हुए हैं। अगर मानव-हृदय में वास करने वाले परमेश्वर पर श्रद्धा रख कर मानव की भलाई को बाहर आने का मौका दिया जाय, तो उसे ये सारे आकर्षण नहीं रहेंगे। यद्यपि आज समाज में सच्चे सेवक कम हैं, फिर भी उन्हींकी इज्जत है। कोई भी चोर किसी चोर की इज्जत नहीं करता है, वह भी भलाई की ही इज्जत करता है। भलाई याने प्रकाश है और बुराई अंधकार। आज बुराई को कुछ स्थान इसलिए मिलता है, क्योंकि उसके साथ कुछ भलाई का भी अंश मिला हुआ रहता है। मानव के मन में कई स्तर होते हैं, उनमें से सबसे ऊपर के स्तर पर वातावरण का असर होता है। अंदर तो परिशुद्ध भलाई ही है। उसी विश्वास पर मेरा काम चलता है। अगर अच्छे लोग भलाई पर पूरा विश्वास रखें और एक होकर काम करें, तो मानव-हृदय की अच्छाई को बाहर आने का मौका मिलता है। हम भलाई का साक्षात् दर्शन नहीं करते हैं, इसलिए संगठन आदि पर विश्वास रखते हैं। सूरज को प्रकाश के प्रचार के लिए किसी भी बाह्य साधन की जरूरत नहीं होती है। परिशुद्ध भलाई हो, तो दुनिया में उसीकी विजय होगी। मेरा तो विश्वास है कि दुनिया में ऐसी कोई भी ताकत नहीं है, जो भलाई के खिलाफ खड़ी हो सके। फिर भी आज दुनिया में बुराई का असर दीखता है, उसके दो कारण हैं—(१) बुराई के साथ कुछ भलाई का भी मिश्रण रहता है, (२) अच्छे लोग भलाई में अव्यभिचारी, अनन्य श्रद्धा नहीं रखते हैं। वे उस एक ही देवता की उपासना नहीं करते हैं, कई देवताओं की उपासना करते हैं, जिनमें भलाई भी एक है। लेकिन अगर हम इन दो दोषों का निवारण कर सकें, तो जैसे प्रकाश के सामने अंधकार टिक नहीं सकता, वैसे भलाई के सामने बुराई टिक नहीं सकेगी।"

अखिल भारतीय सामूहिक-पदयात्रा समिति के कार्यकर्ता पलनी में विनोबाजी से मिले। विनोबाजी ने उस काम की सराहना करते हुए मार्गदर्शन किया—"१९५७ में हमें कम से कम यह करना है कि हिन्दुस्तान में एक भी शख्स ऐसा न हो, जिसने भूदान, संपत्तिदान, श्रमदान, बुद्धिदान—इनमें से कुछ भी न दिया हो। जब हर कोई देगा, तब यह गोवर्धन पर्वत उठेगा। मैं एक दिन में बँटवारे की जो बात करता हूँ, वह अशक्य है, ऐसा मैं नहीं मानता हूँ। परंतु उससे भिन्न बात अशक्य है, ऐसा मानता हूँ। इससे भिन्न तरीके से क्रांति नहीं हो सकती है।" एक भाई ने कहा कि "हमारे काम में कुछ फलासक्ति आने का डर है।" इस पर विनोबाजी ने कहा कि "सकामता के लिए यही औषधि है कि जेब में गीता रखो। हमें जितना दान चाहिए, उतना तो नहीं मिलेगा। उस हालत में या तो आप निराश हो जाओगे या निष्काम बनोगे। इस तरह से जनता ही हमें निष्काम बनायेगी!"

सर्व-सेवा-संघ के चुनाव-संबंधी प्रस्ताव के बारे में एक कार्यकर्ता ने कहा, "कुछ लोग हमसे यह सवाल पूछते हैं कि जब संविधान बन रहा था, उस समय तो आप लोग चुप रहे और अब उस संविधान के अनुसार चुनाव हो रहे हैं, तो उससे आप अलग रहना चाहते हैं। अगर उसी समय आप कुछ कहते, तो संविधान में कुछ सुधार किया जा सकता था!" यह सुन कर विनोबाजी ने हँसते हुए कहा,

"हमारा काम संविधान को तोड़ने का है, उसमें सुधार करने का नहीं, इसलिए जब संविधान बन रहा था, उस समय आपने क्यों तोड़ा नहीं, ऐसा सवाल तो नहीं पूछा जा सकता है ?"

विनोबाजी की बीमारी के समय, उनकी पूर्वनियोजित यात्रा श्री आर्यनायकम्‌जी के नेतृत्व में आगे चलायी गयी। उस यात्रा में एक ग्रामदान तथा दो ग्रामसंकल्प प्राप्त हुए। ग्रामदान के गाँव का नाम है—"परवापालेयम्" याने जिसे कभी नहीं भूल सकते हैं !

एक ऐसे क्षेत्र में विनोबाजी की यात्रा न हो सकी, जहाँ ग्रामदान की काफी संभावना थी। जब एक कार्यकर्ता ने विनोबाजी को यह सुनाया, तो उन्होंने कहा—"भक्ति दो प्रकार की होती है—एक है संयोग की भक्ति और दूसरी है वियोग की। वियोग की भक्ति ज्यादा जोरदार होती है। इसलिए जहाँ हम नहीं जा सके, वहाँ खूब ग्रामदान होना चाहिए।" गुजरात में ग्रामदान का आरंभ हुआ है। उसके लिए एक भाई ने संदेश माँगा, तो विनोबाजी ने उन्हें लिखा, "मैं इन दिनों संदेश आदि देने में बहुत दिलचस्पी नहीं लेता हूँ, क्योंकि मेरी अखंड यात्रा ही अगर संदेश न हो, तो दूसरा संदेश बेकार ही है।"

तंत्रमुक्त आंदोलन को गति देने की दृष्टि से विनोबाजी ने पलनी के बाद दूसरे पड़ाव पर गाँव के दाताओं की एक समिति बनाकर उन्हें भूदान का काम सौंप दिया। इस तरह गाँव-गाँव में समितियाँ बनाने का कार्य अब शुरू होगा।

* * * *

'दीक्षा !'

'संचित-निधि' का आधार तोड़ कर और 'रामसन्निधि' का आधार लेकर के भूदान-आरोहण में आखिरी मंजिल की ओर आगे बढ़ने का आदेश देने वाला विनोबाजी का भाषण समाप्त होते ही सर्व-सेवा-संघ की बैठक के लिए आये हुए सभी छोटे बड़े कार्यकर्ताओं में प्राणसंचार-सा हो गया। मृग जानता नहीं था कि उसके पास कस्तूरी पड़ी है। लेकिन अब किसी ने उसे उसका भान करा दिया। सब महसूस करने लगे कि कोई अज्ञात शक्ति, जो अपने पास गुप्त रूप में पड़ी थी, अब जाग्रत हो रही है।

२२ नवंबर का दिन था। सर्व-सेवा-संघ का तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति का प्रस्ताव हो चुका था। उस रात को बाबा की नींद १२॥ बजे खुल गयी और फिर उनका चिंतन चलता रहा। सुबह की प्रार्थना के पश्चात् ४॥ बजे केरल की बहन राजम्मा उनसे विदा लेने के लिए आयी। उन्होंने उसे पास बिठाया और बाईबल के वचन पढ़ कर सुनाये, जिसमें ईसा मसीह अपने शिष्यों को विदा करते हुए कहते हैं :—

तुम श्रद्धा लेकर जनता में काम करने के लिए निकल पड़ो। अपने पास न सोने की मुहरें रखो, न चाँदी के रुपये रखो, न ताँबे के पैसे ! जिस घर में जाओगे, 'शांति' कहो। अगर वह मनुष्य तुम्हें घर में नहीं आने देगा, तो तुम्हारी शांति तुम्हारे पास आवेगी। जब समाज में जाओ, तो यह मत सोचो कि बोलने वाले तुम हो ! बल्कि यह सोचो कि तुम्हारे मुंह से भगवान् बोलने वाले हैं।"

आखिरी शब्द बोलते समय वे रुक गये, गला भर आया, आँसुओं का प्रवाह बहने लगा। कुछ देर तक मौन रह कर उन्होंने राजम्मा से कहा, 'तुम आज रुक जाओ।'

बारिश बरस रही थी, लेकिन समय होते ही बाबा अगले पड़ाव के लिए चल पडे। रास्ते में श्री राधाकृष्णजी (बजाज) से उन्होंने कहा : "कल रात मेरा उस प्रस्ताव पर चिंतन चलता रहा। मैं चाहता हूँ कि चतुर्विध निष्ठावाले कार्यकर्ता निर्माण हों। चतुर्विध निष्ठा याने सत्य, अहिंसा और अपरिग्रह का पालन, लोकनीति में निष्ठा, निष्काम सेवा करने की तथा सकाम सेवकों को सहन करने की वृत्ति और सर्वोदय को मन-समर्पण। अब सारा तंत्र समाप्त हुआ, यह बहुत ही अच्छा हुआ। परंतु मैं चाहता हूँ कि मेरी तरफ से, व्यक्तिगत तौर पर हर भाषा के लिए एक प्रतिनिधि हो, जिसके साथ मेरा सतत संबंध रहे और जो शून्य बन कर वहाँ काम करें। आंध्र के लिए मैं प्रभाकरजी को अपने प्रतिनिधि के तौर पर भेजना चाहता हूँ।" प्रभाकर जी साथ में ही थे। उन्होंने विनम्रता से उस दायित्व को स्वीकार कर लिया। प्रभाकरजी सेवाग्राम-आश्रम के एक प्रमुख सदस्य रहे हैं।

दोपहर दामोदरजी ने बाबा से पूछा, "क्या राजम्मा केरल वापस जा सकती है ? उसकी दीक्षा तो अब पूरी हुई न ?" बाबा ने कहा, "नहीं, अभी पूरी नहीं हुई।"—शाम को फिरसे उन्होंने राजम्मा को पास बुलाया और कहा—"हम चाहते हैं कि तुम हमारी केरल की प्रतिनिधि बनो। श्रद्धा रखो, सामर्थ्य श्रद्धा से आता है। मैंने तुम पर विश्वास रखा है, तुम अपने पर विश्वास रखो। तुम तो शंकराचार्य के प्रदेश की हो। वे अत्यंत प्रखर ज्ञानी थे। **ज्ञान-किरणों के सामने किसी प्रकार का अज्ञान सहन नहीं किया जाता है। पूर्ण नम्र, फिर भी अत्यंत प्रखर होकर काम करो। चित्त को किसी भी प्रकार के रागद्वेष का, मानापमान का स्पर्श मत होने दो। वह सब अन्धकार है।** जैसे ईसा ने कहा था कि सोचो मत कि क्या बोलना है, तुम नहीं बोल रहे हो, तुम्हारे मुँह से भगवान् बोल रहा है। शंकराचार्य ने देश के चार कोनों में अपने चार शिष्य भेजे थे। वे शिष्य फिर से कभी मिलेंगे, ऐसी योजना नहीं थी, क्योंकि उनके बीच सैंकड़ों मील का फासला था। लेकिन वे हिम्मत के साथ गये। वैसे हमें भी हिम्मत रखनी चाहिए। आगे चल कर तुम लोगों की मेरे पास आने की कुछ योजना हो सकती है, लेकिन फिलहाल कुछ योजना नहीं है यह सोच कर, तीर के मुआफ़िक जाकर काम करो। मुक्त प्रचार, चिंतन, मनन, करो, जीवन-निष्ठा रखो और जीवनशुद्धि की ओर ध्यान दो। मैंने तो तुम्हें जीवन **के लिए पाथेय दे ही रखा है—गीता प्रवचन, स्थितप्रज्ञ-दर्शन और ईशावास्य-वृत्ति! वे बार-बार पढ़ा करो। अपने को हीन न समझो।** हाँ, अपने को ऊँचा समझने की **भी जरूरत नहीं है।** अपने पर श्रद्धा रखो। जाओ, हमारी तरफ से बाण छूट गया है।"

दीक्षा समाप्त हुई। जिसने आदेश दिया, वहीं आधार देगा, जिसने प्रेरणा दी वही पाथेय देगा, जिसने राह दिखायी, वही रक्षण करेगा, इस श्रद्धा से राजम्मा शंकराचार्य के केरल प्रदेश की ओर चल पड़ी।

ऊसर में खेती

(बाबा राघवदास)

आगरा जिले में भू-दान-यज्ञ पदयात्रा में एक नया प्रयोग देखने का अवसर मिला और वह है ऊसर में खेती। अक्सर हमारे कुछ साथी और हितचिन्तक यह प्रश्न करते हैं कि तुम लोगों को भू-दान में जो जमीन मिली है, वह ऊसर होती है, निकम्मी होती है, ऐसी जमीन को लेने से क्या लाभ ?

इस प्रश्न का उत्तर 'विशाल भारत' हिन्दी मासिक के सफल सम्पादक तथा प्रसिद्ध रचनात्मक कार्यकर्ता श्रीरामजी शर्मा ने ऊसर में खेती करके हमें दिखा दिया है। यह प्रयोग चूड़ी के कारखाने के लिए प्रसिद्ध फिरोजाबाद शहर से ६–७ मील उसेनी गाँव में किया जा रहा है।

श्री शर्माजी ने यहाँ बबूल का २०–२२ एकड़ का जंगल लगाया है। उन्होंने कहा है कि खेती होगी गौ से। गौवों का गोबर ही ऊसर को ठीक करता है। उससे उत्पन्न होने वाले कीड़े तथा केंचुए जमीन को पोली कर देते हैं और खेती योग्य बना देते हैं। इस प्रयोग से आसपास के गाँवों में गौवों से काफी सुधार हुआ है, चारा बढ़ गया है। रसायन-खाद का बोलबाला यहाँ कतई नहीं है। हमारी देहाती खाद ही खेती के लिए सबसे, अच्छी है और बबूल की फली उपयोग करने से भी खेती के लिए लाभ होता है, यह यहाँ अनुभव हुआ। यहाँ इसके साथ चमड़ा कमाना तथा मुर्दों की खाल निकालने का कार्य भी होता है। मकान मिट्टी के बने हैं।

शर्माजी का कहना है कि बबूल में मेरा इन्शोरन्स (बीमा) है। यह बबूल का जंगल कुछ वर्षों के बाद हजारों रुपयों की आय देगा। झड़बेरी पर कलम कर एक हजार कलमी बेर लगाये गये हैं, फलदार वृक्ष भी हैं। उनका यह भी कहना है कि नीलगाय खेती को बहुत हानि पहुँचाती है, जो यहाँ बहुत है। इसलिए हम उसका शिकार कर उसकी खाल उतार कर उसका मांस खेत में गाड़ देते हैं, वह भी खेत को कमजोर बना देता है। गोसेवा और चारे की खेती में भी वे जुटे हुए ही हैं। कई किस्म के चारे यहाँ पैदा किये जाते हैं।

यह प्रयोग हमारी बड़ी सहायता कर सकता है। जिन जिलों में हमें ऊसर भूमि मिली है, वहाँ के साथी और उत्साही युवक यहाँ आकर शर्माजी का प्रयोग देखें। सचमुच ऐसे प्रयोग हमारे लिए तीर्थस्थान है। सरकार इससे भी क्या कुछ लाभ उठा नहीं सकती ? हम गोसेवकों से निवेदन करेंगे कि वे भी यहाँ आकर इन प्रयोगों को देखें।

यह सब अहिंसा की तैयारी है !

(विनोबा)

आज दुनिया के जिम्मेवार नेताओं की मनःस्थिति संशयात्मक अवस्था में है। पर जो दिमाग को सुनिश्चित, निःसंशय और शांत रख सकेंगे, वे ही दुनिया का नेतृत्व कर सकेंगे, क्योंकि कर्मयोग के लिए कम से कम कोई एक निश्चय तो चाहिए ही। लेकिन आज जिन पर दुनिया की जिम्मेवारियाँ हैं, वे बेचैन हैं, उन्हें कोई राह नहीं सूझ रही है। इधर सैन्य पर से श्रद्धा छोड़ नहीं सकते, उधर सैन्य पर श्रद्धा बैठ नहीं रही है ! वैसे तो यों दीखता है कि पता नहीं, विश्वयुद्ध किस क्षण शुरू होगा, परंतु जो ताकतें काम कर रही हैं, वे अहिंसा की दिशा में ही हैं, ऐसा मैं मानता हूँ। यह दूसरी बात है कि अहिंसा को मौका देने के पहले काफी 'अ-योजित' विप्लव भी हो सकता है ! परंतु सारी वृत्तियाँ अहिंसा की ओर ही जा रही हैं। आज चुनाव के गलत तरीकों, पक्षीय राजनीति के दुष्परिणामों, लोकतंत्र की खामियों आदि पर लोग सोचने लगे हैं, जो कि अब तक नहीं सोचते थे। दुनिया की कोई एक शक्ति है, जो ऐसे विचार सुझाये जा रही है। समान रूप से विचार-प्रवाह चलते हैं। एक-एक जमाने में भिन्न-भिन्न स्थानों में अनेकों को एक ही विचार सूझता है। मरुत-गण बह रहे हैं, इसका अनुभव प्रतिक्षण आता है। तुलसीदासजी के शब्दों में—'यह सब शतरंज का खेल चल रहा है, काठ के ही हाथी-घोड़े हैं।' बम के प्रयोग, शस्त्रास्त्रों की वृद्धि, यह सब ऐसा ही व्यर्थ का खेल है। परंतु इन सारी शक्तियों का उद्देश्य निश्चित ही अहिंसा में परिवर्तित होना है। सन् सत्तावन में क्या हो सकता है, कोई नहीं कह सकता। लेकिन अनेकों की इच्छाशक्ति 'अनिच्छा' से भी इकट्ठी हो रही है ! यह मैं एक विचित्र भाषा में बोल रहा हूँ। परंतु जिनके विचारों में काफी भेद था, उनके विचारों का भी सम्मेलन हो रहा है। वे नजदीक आ रहे हैं। हिंदुस्तान के कम्यूनिस्टों की ही मिसाल लीजिये। वे अब संशय के नहीं, सहानुभूति के पात्र हैं। परिस्थिति कुछ ऐसी पैदा हो रही है कि गलत कल्पनाएँ छोड़ने के लिए वे मजबूर हो रहे हैं। अनजाने उनके विचार अहिंसा की तरफ ही आ रहे हैं। एक शक्ति हमें भूदान की प्रेरणा दे रही है, तो वही शक्ति उनके चिंतन में भी परिवर्तन ला रही है। उनको उत्तर मिले, ऐसा भूदान का विचार बलवान बनाने का प्रयत्न अभी हमने नहीं किया है। पर आंदोलनों की फलश्रुति एकड़ों के नाप से नहीं देखी जाती। वह तो एक दिन में हो सकता है। आज ही हम कहाँ से कहाँ कल्पना में चले गये हैं। भूदान, फिर ग्रामदान और अब ग्रामराज तक पहुँच कर स्वतंत्र जनशक्ति की बात सोचने लगे। 'शासनमुक्त समाज' शब्द भी निकला। इस तरह से योजना होती है और उसमें हम सब काम करते हैं। इसमें परवशता है, ऐसा आक्षेप लिया जा सकता है। वह परवशता है, परंतु दूसरे की नहीं, परमेश्वर की वशता है। हम केवल औजार हैं। भगवान् ने बुद्धि दी है, उसका उपयोग जो करना चाहते हैं, करें। परंतु उस उपयोग में कहीं तो समाप्ति है और यह शक्ति ही वहाँ काम कर रही है, जहाँ कि हमारी पहुँच नहीं है !

हमने चुनाव की पद्धति पर आलोचना की। वह हमारी स्वतंत्र सूझ नहीं है। गांधीजी ने ऐसा ही कहा था। बोधगया-संमेलन में जब हमने यह विचार प्रकट किया, तो हमने पहले वैसा कुछ सोचा नहीं था। हमने पंडितजी को उस संमेलन में बुलाया, यद्यपि मेरी तरफ से ऐसी धृष्टता कभी नहीं होती है। तकलीफ उठा कर वे आये। चर्चा और परिप्रश्नों के खयाल से दो-तीन बातें मैंने उनके सामने रखीं—इसलिए नहीं कि उनसे कोई फौरन जवाब मिले या मैं कोई समस्याएँ पेश करूँ—सहज विचार मैंने पेश किये। उन्होंने चारों ओर से सोचते हुए वहाँ पर कुछ जवाब दिया। स्वाभाविक ही उस जवाब में कुछ निश्चय-वृत्ति की अपेक्षा नहीं थी, क्योंकि यह संभव भी नहीं था। दो साल के बाद जब वे मिले, तो हमने पाया कि उनका मानस इसके लिए तैयार हुआ है। यह सारी अहिंसा की तैयारी है। एस. आर. सी. के मामले में भी जो हुआ, उससे भी भास होता है कि ऐसी ही कुछ योजना चल रही है।

अतः सन् '५७ में जो क्रांति होगी, उसके लिए हमें भी समर्पण की तैयारी कर रखनी होगी, ताकि मौके पर हम तैयार रहें। मौका न भी आये, तो हमें तैयारी जरूर रखनी है। क्रांति आ जाय और हम असावधान रहे, ऐसा नहीं होना चाहिए। इस क्रांति के हम योग्य वाहक बनें। तंत्रमुक्ति और निधिमुक्ति का आज का हमारा कदम उस क्रांति की रिहर्सल ही है !

(पलनी, २१-११-५६, संघ-बैठक के भाषण से)

अ० भा० सर्व-सेवा-संघ-प्रस्ताव :

तंत्र और केंद्रीय निधि से मुक्ति !

[ता० २२-११-५६ को 'पलनी-मदुराई की सभा में स्वीकृत प्रस्ताव]

१८ अप्रैल, १९५१ के दिन भू-दान-यज्ञ-आन्दोलन की शुरूआत हुई। अप्रैल, १९५२ में सेवापुरी-सम्मेलन के अवसर पर श्री विनोबाजी के नेतृत्व में सर्व-सेवा-संघ ने इस आंदोलन को देशव्यापी बनाने का भार अपने ऊपर लिया। सर्व-सेवा-संघ ने इस काम के लिए प्रान्त-प्रांत में भू-दान-समितियों की रचना की। प्रांतों में जिला तथा नीचे के संगठन भी कहीं-कहीं बने हैं। इस रचना के जरिये पिछले साढ़ेचार वर्ष में भू-दान-यज्ञ-आन्दोलन का संदेश और कार्य देश में फैला है। इस अर्से में करीब साढ़े पांच लाख दाताओं द्वारा ४२ लाख एकड़ जमीन मिली है, जिसमें से करीब पाँच लाख एकड़ जमीन डेढ़ लाख परिवारों में बँट चुकी है। ६७ हजार दाताओं से वार्षिक ११ लाख रुपये से अधिक के संपत्ति-दान-यज्ञ भी प्राप्त हुए हैं और करीब १,५०० पूरे गाँवों ने ग्राम-दान करके जमीन के ग्रामीकरण की ओर कदम बढ़ाया है। इस प्रकार छठा हिस्सा जमीन के दान से शुरू होकर यह आन्दोलन जमीन पर से व्यक्तिगत मालकियत के विसर्जन तक पहुँचा है और इसके जरिये अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया का दर्शन हुआ है।

प्रारंभिक अवस्था में आन्दोलन को आगे बढाने के लिए भू-दान-समिति आदि तंत्र का उपयोग था। उस तंत्र को चलाने के लिए गांधी-निधि से आर्थिक मदद ली गयी, जो सहज मिल सकती थी। लेकिन अब सोचने का समय आ गया है। छोटे पौधे की रक्षा के लिए लगायी गयी बाड़ आगे जाकर गैरजरूरी ही नहीं, पौधे की बढ़ोतरी के लिए बाधक भी बन जाती है। उसी तरह तंत्र के सीमित दायरे में रह कर तथा संचित निधि के आधार पर कोई भी आन्दोलन व्यापक रूप ग्रहण नहीं कर सकता। आन्दोलन का क्रान्तिकारी स्वरूप प्रगट होने के लिए यह आवश्यक है कि वह इस प्रकार के बंधनों से मुक्त होकर जन-आधारित बने और कोटि-कोटि जनता स्वयं उसे उठा ले।

भू-दान, संपत्ति-दान तथा ग्राम-दान के जरिये व्यक्तिगत मालकियत के विसर्जन का और ग्राम-संकल्प की पद्धति के द्वारा ग्रामराज की शक्यता का विचार काफी परिणाम में देश में फैला है। और, सर्व-सेवा-संघ की राय में, अब समय आया है, जब कि आन्दोलन को तंत्र और केन्द्रित निधि के अवलंब से मुक्त किया जाय। भू-दान-यज्ञ-आन्दोलन के जरिये जिस अहिंसक क्रांति को हम प्रगट करना चाहते हैं, उसके लिए यह कदम आवश्यक है। संघ का विश्वास है कि इस प्रकार निरालंब बनने पर आन्दोलन को जनता का सीधा आलम्बन प्राप्त होगा, जनता स्वयं आन्दोलन को उठायेगी और क्रांति के चरण आगे बढ़ेंगे।

अतः अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ की यह सभा सर्वानुमति से यह निश्चय करती है :—

(१) (अ) जनवरी, १९५७ से भू-दान-यज्ञ के कार्य के लिए बनाया गया कुल मौजूदा तन्त्र अर्थात् प्रान्तीय समितियाँ व संयोजक तथा उनके अन्तर्गत जिला आदि संगठन व संयोजक विसर्जित किये जायँ।

(२) (अ) जनवरी, १९५७ से भू-दान-आन्दोलन के काम के लिए गांधी-स्मारक-निधि या अन्य किसी केन्द्रित निधि से सहायता लेना बन्द किया जाय। पदयात्राएँ, शिविर, सभा-सम्मेलन आदि के समय स्थानीय लोग मिल कर जो व्यवस्था अपनी ओर से कर सकते हैं, करें। उसके अलावा भू-दान काम के लिए चन्दा भी न किया जाय।

(३) इस प्रकार "निधि-मुक्ति" के बाद भू-दानयज्ञ-आन्दोलन के लिए नीचे लिखे जन-आधारित या श्रम-आधारित स्रोतों का ही अवलम्ब रहेगा :—
१. संपत्तिदान, २. सूतांजलि, ३. सूत्र-दान, ४. अन्नदान, और ५. साहित्य-बिक्री-कमीशन।

(४) गांवों के निर्माण-कार्य के लिए संचित निधि, संपत्ति-दान, साधन-दान तथा सरकारी या अन्य पैसे का उपयोग किया जा सकेगा।

गया, २५-११-५६, —सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री

सर्व-सेवा-संघ की पलनी-सभा के अन्य प्रस्ताव :

लोकनिष्ठ कार्यरचना

अहिंसक क्रांति की सफलता उसके व्यापक और जन-आधारित होने पर अवलम्बित है। पिछले पाँच वर्षों में भू-दान-यज्ञ-आन्दोलन भूमि के आंशिक दान से शुरू होकर ग्राम-दान तक पहुँचा है। इससे आन्दोलन के जन-आधारित होने का दर्शन हमें कुछ क्षेत्रों में हुआ है। सर्व-सेवा-संघ ने अब १ जनवरी, १९५७ से आन्दोलन को तंत्र-मुक्त और निधि-मुक्त कर के उसे जनता पर छोड़ने का फैसला किया है।

आन्दोलन की कार्य-प्रणाली के परिवर्तन के साथ ही कार्यकर्ताओं की दृष्टि और काम के ढंग में भी परिवर्तन होना आवश्यक है। उनको अपने जीवन में और कार्य-पद्धति में इस अहिंसक क्रांति का अधिक स्पष्ट रूप से दर्शन कराना होगा। इसलिए यह सोचा गया है कि ऐसे सेवक जो :

(१) सत्य, अहिंसा और अपरिग्रह में विश्वास रखते हों तथा उसके अनुसार जीवन बिताने की कोशिश करते हों;

(२) जिनकी पक्षातीत लोकनीति में निष्ठा हो और इसलिए पक्षीय राजनीति से, जिसमें सब प्रकार के चुनाव भी शामिल हैं, सर्वथा मुक्त रहते हों;

(३) जो निष्काम वृत्ति से, अर्थात् किसी प्रकार की कामना या आकांक्षा रखे बिना, सेवा करने की भावना रखते हों;

एक-एक जिले की जिम्मेवारी उठाने के लिए तैयार हों। सेवा के सिवा किसी भी तरह का अधिकार उनके पास नहीं होगा। स्वयं पक्षातीत होने के कारण सभी पक्षों का सहयोग भू-दान-काम में मिले, इसके लिए वे प्रयत्नशील रहेंगे और सर्व-सेवा-संघ से सीधा संबंध रखेंगे। भू-दान-समितियों के नाम से कोई संगठन वे नहीं बनायेंगे। गाँव-गाँव में जहाँ संभव हो, दाताओं, आदाताओं आदि को लेकर स्थानीय समितियाँ बन सकती हैं, जो इस आन्दोलन के काम को उठा लें।

सर्वोदय और विशेष कर भू-दान-यज्ञ संबंधी साहित्य के प्रकाशन और प्रचार के लिए हर भाषीय क्षेत्र में एक सर्वोदय-प्रकाशन-समिति बने, ऐसा प्रयत्न सर्व-सेवा-संघ करेगा। भूदान से संबंधित भिन्न-भिन्न दान-पत्रों के फार्म्स भी लोगों को वहाँ से मिल सकेंगे। जिला-सेवक तथा ग्राम-समितियाँ अपने काम का अहवाल समय-समय पर सीधे सर्व-सेवा-संघ को भेजने के अलावा अपने क्षेत्र की प्रकाशन समिति के पास भी भेजेंगे। प्रकाशन-समिति अपने क्षेत्र के आन्दोलन संबंधी जानकारी का संकलन समय-समय पर प्रकाशित करेगी।

संपत्ति-दान का विनियोग

संपत्ति-दान के विनियोग के बारे में चर्चा हुई। अभी संपत्ति-दान की रकम भूमिहीनों को साधन देने, कार्यकर्ताओं के निर्वाह तथा सर्वोदय-साहित्य-प्रचार, इन तीन मदों में खर्च करने का निर्देश श्री विनोबाजी की ओर से है। संपत्ति-दान-यज्ञ को व्यापक बनाने की दृष्टि से यह सुझाव आया कि संपत्ति-दान का मूल उद्देश्य लोगों को समझाया जाय, पर उसके बाद संपत्ति-दान का विनियोग दाता पर ही छोड़ दिया जाय। समझ कर संपत्ति-दान करने वाला उसे गलत कामों में खर्च नहीं करेगा, यह भरोसा हमें रखना चाहिए। मजदूरों और विद्यार्थियों में यह छूट देना उचित होगा कि वे अपने संपत्ति-दान का उपयोग अपने आस-पास ही गरीब लोगों के लिए कर सकें। दूसरा विचार चर्चा में यह सामने आया कि संपत्ति-दान का उपयोग किन कामों में करें, इसके बारे में कुछ भी निर्देश दिये बिना संपत्ति-दान का जो मूल हेतु अहिंसक वृत्ति को आगे बढाने का है, उसके एवज़ में वह एक राहत का कार्यक्रम रह जायगा।

श्री विनोबाजी ने कहा कि छोटे-छोटे दान-दाता संपत्ति-दान का उपयोग अपने आस-पास "दर्शन-क्षेत्र" में ही कर सकें, यह उचित होगा। इससे उन्हें क्रान्ति की प्रक्रिया का प्रत्यक्ष दर्शन और अनुभूति होगी। यह भी सही है कि संपत्ति-दान के प्रत्यक्ष निरंकुश उपयोग से इष्ट-सिद्धि नहीं होगी—चाहें अनिष्ट न हो। पर जो "अंकुश" हो, वह अहिंसात्मक हो, यानी वैचारिक हो।

चर्चा के बाद संपत्ति-दान के विनियोग के बारे में नीचे लिखा निर्णय किया गया :

संपत्ति-दान की रकम का खर्च "भूदान-मूलक, ग्रामोद्योग-प्रधान, अहिंसात्मक क्रांति" के उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाय। उदाहरण के लिए कुछ मदें नीचे दी जाती हैं, जिनमें से किसी एक या अधिक में संपत्ति-दान का उपयोग किया जा सकता है :—

(१) भू-दान-यज्ञ में जिन भूमिहीनों को जमीन दी जायगी, उनको साधन-सामग्री मुहय्या करना तथा प्राप्त हुई जमीन को तैयार करने में मदद करना।

(२) भू-दान-यज्ञ-आन्दोलन के खर्च के लिए उपयोग करना।

(३) सर्वोदय-साहित्य के प्रचार में मदद करना।

(४) विद्यार्थी वर्ग या मजदूर वर्गमें छोटे-छोटे दान-दाता अपनी परिस्थिति के अनुसार भू-दान-यज्ञमूलक क्रान्ति को आगे बढ़ाने के उद्देश्य से मिलजुल कर या अलग-अलग अन्य कामों में भी खर्च कर सकते हैं। इस मामले में वे अपने "जिला-सेवक" की सलाह ले सकते हैं।

संपत्ति-दान-दाता को अपने संपत्ति-दान की रकम में से एक-तिहाई रकम स्वेच्छा से अन्य सार्वजनिक हित के कामों में खर्च करने की मौजूदा छूट कायम रहेगी।

गया, २५-११-'५६ —— —सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री

प्रकाशन-समाचार

नये प्रकाशन :

विनोबा के ता० २०-२१ और २४ नवंबर के पलनी-सभाओं के भाषण, जो सार रूप में इस अंक में छपे हैं, पुस्तकाकार पूर्ण रूप में शीघ्र ही प्रकाशित हो रहे हैं।

—प्रकाशक

भूदान यज्ञ : क्या और क्यों ? : श्री चारुचन्द्र भण्डारी, पृष्ठ-संख्या ३०६, मूल्य १)

इस पुस्तक के सम्बन्ध में विनोबाजी कहते हैं :—

"चारु बाबू ने हमारे आन्दोलन के बुनियादी विचारों का बहुत ही अच्छे ढंग से विवरण किया है। पुस्तक मुझे सर्वांगपरिपूर्ण मालूम हुई।...... जो यह पुस्तक लेगा, उसके हृदय से दानधारा नित्य बहती रहेगी।"

इस पुस्तक का अनुवाद भारत की सभी भाषाओं में हो रहा है।

छात्रों के बीच : श्री जयप्रकाश नारायण, पृष्ठ-संख्या ४८, मूल्य ।)

पटना कालेज के मैदान में छात्र-प्रतिनिधियों के बीच ११ मार्च, '५६ को श्री जयप्रकाश नारायणजी ने जो महत्त्वपूर्ण भाषण दिया था, जिसमें भूदान और सर्वोदय की सैद्धान्तिक विवेचना के साथ-साथ छात्रों को आवाहन भी है।

अ. भा. सर्व-सेवा-संघ प्रकाशन, राजघाट, काशी (उ. प्र.) ——

सामूहिक पदयात्रा के सिलसिले में शाहाबाद (बिहार) जिला भूदान-समिति के सदस्य, भभुआ सबडिविजन के संयोजक श्री रामकिसुन सिंहजी का अकस्मात देहावसान २५ नवम्बर '५६ को जिला-समित बैठक में हुआ।

—संयोजक, ज़िला भूदान-समिति, जमुहार

विषय-सूची

क्रम	विषय	लेखक	पृष्ठ
१.	सन् '५७ का आवाहन	विनोबा	१
२.	कम्युनिस्टों से मित्रतापूर्ण निवेदन : १.	जयप्रकाश नारायण	२
३.	संयुक्त राष्ट्रसंघ और गांधीवाद	रामचंद्र गोरा	३
४.	नयी तालीम के युग-कार्य	धीरेंद्र मजूमदार	४
५.	प्रजातंत्र में शक्ति का अधिष्ठान	जो. कॉ. कुमारप्पा	४
६.	निधि-मुक्ति के बाद : अष्टविध कार्यक्रम	विनोबा	५
७.	संचित निधि का आधार छोडने के बाद ?	,,	६
८.	अहिंसा के लिए त्रिविध निष्ठा आवश्यक : १	,,	७
९.	मथुरा और आगरा जिले में बाबा राघवदासजी	रामचंद्र मेहरोत्रा	८
१०.	तमिलनाड की क्रांति-यात्रा से	निर्मला देशपांडे	९
११.	ऊसर में खेती	बाबा राघवदास	१०
१२.	यह सब अहिंसा की तैयारी है !	विनोबा	११
१३.	अ. भा. सर्व-सेवा-संघ के प्रस्ताव : १. तंत्र और केंद्रीय निधि से मुक्ति, २. लोकनिष्ठ कार्य-रचना, ३. संपत्तिदान का विनियोग	–	११-१२

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव-भूषण प्रेस, वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी। फोन नं० १२८५